अंतर्मन के कोने से...

एकल काव्य धारा

गीता द्विवेदी

अंतर्मन के कोने से...

एकल काव्य धारा

गीता द्विवेदी

A Wordsmith Paperback

पहला संस्करण 2020
© रचनाकार के अधीन

Published By:

The Indian Wordsmith

PANCHKULA, HARYANA.
9888919667,930611585
EMAIL: 2theindianwordsmith@gmail.com

Cover Photo by Vivek Doshi on Unsplash
Book Layout by Vikas Sharma 'Daksh'

Designed & Released By:

The Indian Wordsmith

PANCHKULA, HARYANA.

ISBN 978-81-944012-8-5
मूल्य : ₹ 50/-

('अंतर्मन के कोने से...' में प्रकाशित सभी रचनाओं की मौलिकता की ज़िम्मेदारी लेखक की है। रचनाओं की मौलिकता संबंधी किसी भी विवाद हेतु संपादक, प्रकाशक एवं मुद्रक, किसी भी तरह से जवाबदेह नहीं होंगे। किसी भी तरह के वाद-विवाद हेतु न्याय क्षेत्र पंचकुला, हरियाणा होगा।)

रमेश पोखरियाल 'निशंक'
Ramesh Pokhriyal 'Nishank'

सत्यमेव जयते

मंत्री
मानव संसाधन विकास
भारत सरकार
MINISTER
HUMAN RESOURCE DEVELOPMENT
GOVERNMENT OF INDIA

संदेश

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता है कि छत्तीसगढ़ के सुदूरवर्ती जिले सरगुजा में प्राथमिक शिक्षिका के रूप में कार्यरत श्रीमती गीता द्विवेदी ने अपने रचनात्मक भावों को कलात्मक अभिव्यक्ति प्रदान करते हुए 'अंतर्मन के कोने से' शीर्षक काव्य-संकलन का प्रकाशन किया है।

भारतीय वाङ्गमय में साहित्य का आदर्श 'सत्यम्, शिवम्, सुंदरम्' को स्वीकार किया गया है। वाणी के तप का उपदेश देते हुए भगवान श्रीकृष्ण ने श्रीमद्भागवद्गीता के 17वें अध्याय में अर्जुन से कहा है कि "अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत् । स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्गमय तप उच्यते ॥" अर्थात् सत्य, प्रिय, हितकर और वेद-शास्त्रों के अनुकूल वाक्यों का सृजन वाणी का तप है। वाणी के इस तप में काव्य के ज्ञानात्मक एवं भावात्मक दोनों पक्षों का समावेश किया गया है। बुद्धि तत्व से 'सत्यं' और 'शिव' की रक्षा होती है और कल्पना तथा भाव तत्व से 'सुंदरम्' का निर्माण होता है। 'कल्पना' से 'सुंदरम्' का शरीर बनता है और भावना में उसकी आत्मा रहती है। सच्चा साहित्य तभी रचा जाता है जब भाव हृदय की संकुचित सीमाओं में आबद्ध न रहकर बाहर आने को छटपटा उठते हैं। सुप्रसिद्ध कवि वर्ड्सवर्थ ने कविता की इस रचना प्रक्रिया के बारे में कहा है "Poetry is the spontaneous overflow of powerful feelings. It takes its origin from emotions recollected in tranquillity." हिंदी आलोचकों एवं आचार्यों ने भावों के इस तीव्र प्रवाह को शब्दबद्ध करने की प्रक्रिया को 'लोकमंगल की साधनावस्था' कहा है। 'जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है। हृदय की इसी मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द-विधान करती आई है, उसे कविता कहते हैं। इस साधना को हम भावयोग कहते हैं और कर्मयोग तथा ज्ञानयोग के समकक्ष मानते हैं।' लोकमानस में प्रतिष्ठित संत-कवि तुलसीदास ने जहाँ आरम्भ में 'स्वांतः सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा' कहा था तो बाद में 'सुरसरि सम सब कहं हित होई' कहकर काव्य के इसी लोकमंगलकारी स्वरूप पर मुहर लगाई है।

मुझे विश्वास है कि श्रीमती द्विवेदी का काव्य संग्रह 'अंतर्मन' की बात करते हुए भी भारतीय परम्परानुसार स्वयं को लोकमंगल की भावभूमि पर प्रतिष्ठित कर सकेगा।

(रमेश पोखरियाल 'निशंक')

सबको शिक्षा, अच्छी शिक्षा

स्वच्छ भारत

Room No. 3, 'C' Wing, 3rd Floor, Shastri Bhavan, New Delhi-110 115
Phone : 91-11-23782387, 23782698, Fax : 91-11-23382365
E-mail: ...mhrd@...in

समर्पित

"सत्य, समर्पण, सादगी सहयोग और अपने लक्ष्यों पर अटल ममतामयी माँ श्रीमती अन्नपूर्णा देवी एवं पिताजी श्री राम नरेश पान्ड़ेय जी के श्रीचरणों में सादर समर्पित"

गीता द्विवेदी

प्रक्कथन

आज मेरी स्वरचित दूसरी पुस्तक "अंतर्मन के कोने से....." आप सभी साहित्य प्रेमी जनों के हाथों में देख, मन प्रफुल्लित होकर हर्षोल्लास से भर गया। एक कहावत है कि जब-जब साहित्यकार कि नई कृति प्रकाशित होती है, तो उस साहित्यकार का नया जन्म होता है। यह एक पुरानी कहावत जरूर है पर यथार्थपूर्ण है। इस पुस्तक की खास बात यह कि पुस्तक समीक्षा नेपाल की एक शिक्षिका और सुप्रसिद्धि समीक्षक श्रीमती कंचन पान्ड़ेय जी द्वारा लिखी गयी है और पुस्तक की साज-सज्जा, रूप-रेखा पंचकूला, हरियाणा में तैयार हुयी है। पुस्तक की छपाई का कार्य दिल्ली में सम्पन्न हुआ। कविता का लेखन कार्य और पाण्डुलिपि का टंकण बलरामपुर और सरगुजा में हुआ, तथा मेरा जन्म अम्बिकापुर नगर मे हुआ है। कहने का आशय यह है कि भारतवर्ष के विभिन्न राज्यों और जिलों का स्नेह, इस पुस्तक को मिला है।

अम्बिकापुर से प्रकाशित समाचारपत्र 'घटती-घटना' में, जब पहली बार, मेरी रचना 'एक चिन्ता' शीर्षक से, दिनांक 08.05.2015 को प्रकाशित हुई, तथा साहित्यप्रेमी जनों का प्रशंसाभरा उत्साहवर्धक संदेश एवं आशीर्वाद मिला तो मेरी लेखनक्रिया को और अधिक क्रियाशीलता प्राप्त हुई। सच पूछा जाये तो साहित्य के क्षेत्र में साहित्यकार को प्रोत्साहन से ही साहित्यकार की लेखनी चलती है। साहित्य के क्षेत्र में प्रोत्साहन से आत्मबल मिलता है। जब समाज के पटल पर रचनाकार के रचना पर खुली चर्चा होती है, तो रचना के दोनों पक्षों की साधारणतः समीक्षा हो जाती है। रचना का केंद्रीय भाव, भाषा, मात्राओं की शुद्धता, लेखन का आशय, पाठकों का पसंदीदा तथ्य एवं रचनाकार का चिंतन आदि तथ्यों का मूल समाज के पटल पर आता है, जिससे सबसे ज्यादा फायदा रचनाकार को होता है। मेरा सौभाग्य है कि यह प्रक्रिया मेरी रचनाओं पर अनवरत चलती रही है, जिससे निरंतर मैं अपने लेखन को सुधारती रही।

स्थानीय अखबारों में मेरी रचनाएं खूब प्रकाशित हुई, जिनमें प्रमुखतः रिहंद टाईम्स, आदित्य समय, अरण्यांचल, छत्तीसगढ़ फ्रंटलाईन, छत्तीसगढ़ का पहरेदार, अम्बिकावाड़ी, घटती-घटना का नाम मुख्य है । इसके अलावा दूसरे राज्यों, बिहार से प्रकाशित समाचारपत्र पटनानामा और मध्यप्रदेश से प्रकाशित साहित्य अकादमी की पत्रिका 'साक्षात्कार' मे भी मेरी रचनायें प्रकाशित हुई। साहित्यसुधीजनों ने मेरी रचना पढ़कर टेलीफोनिक संवाद किया, स्थानीय लोगों ने रचना के संदर्भ में मौखिक संदेह भी दिये, जिससे मेरे लेखन को उत्साह मिला। मैं लिखती रही , और मेरी रचना अखबारों में छपती रही ।

साहित्य सृजन का दूसरा पक्ष है काव्य मंच। प्रारंभ में अम्बिकापुर नगर के कवियों से मेरा परिचय नहीं था। 31.07.2015 को खण्ड़ शिक्षा अधिकारी अम्बिकापुर एवं हिन्दी साहित्य परिषद सरगुजा के आदरणीय अध्यक्ष महोदय कविवर श्री सुरेश प्रसाद जायसवाल जी, कविवर देवेन्द्र दुबे जी (शिक्षक) और नगर के एकलौते हास्यकवि श्री विनोद तिवारी जी (शिक्षक) मेरे घर आये, मेरी रचना सुने और अपनी भी रचना सुनाऐ। वह दिन आज भी मुझे याद है, मैं मन ही मन खुश हो रही थी, मेरे लिए मानो तो साहित्यिक संस्थाओं में प्रवेश के लिए साक्षात्कार हो रहा था। कविवर जनों ने अखबारों में छपी रचनाओं के पृष्ठों को उलटा और पढ़ा तथा मेरी रचना भी सुने। मैंने भी हर प्रकार कि रचना सुनाई और मेरी रचना पर कविवर जनों कि जो प्रतिक्रिया आई, उससे मैं भी फुले न समाई। यानी मैं उस अघोषित साक्षात्कार रूपी परिक्षा में पास हो गई। उस दिन से मेरा काव्यमंचों पर आने -जाने का क्रम चल पड़ा। छोटी काव्यगोष्ठी हो या बड़ा कविसम्मेलन सभी प्रकार के आयोजनों के लिए आमंत्रण मिलने लगा और मै भी खुश मन से सहभागी होने लगी। इस तरह से मैं भी अम्बिकापुर शहर के नवोदित साहित्यकार से स्थापित साहित्यकारों कि श्रेणी की गिनती में आ गई और स्थापित साहित्यकारों की श्रेणी में बैठने लगी। हालांकि मैं अभी भी अपने आपको नवांकुर साहित्यकारों के श्रेणी में मानती हूँ।

धीरे-धीरे मेरी रचनाओं की संख्या सौ से अधिक पार हो चुकी थी। साहित्य सुधीजनों और मेरे शुभचिंतकों कि अपेक्षाएं पुस्तक प्रकाशन के ओर इंगित करने लगी। मेरी पहली पुस्तक 'अनुभूति' काव्यसंग्रह का प्रकाशन नवजागरण प्रकाशन नईदिल्ली से हुआ। इसके लिए आदरणीय श्री राजकुमार अग्रहरी जी को धन्यवाद देती हूँ। बहुत सुन्दर और आकर्षक आवरण में अच्छी मुद्रित पुस्तक। थोड़ा परेशानी हुई किपुस्तक मिलने में नौ दस माह लग गये। राजकुमार अग्रहरी जी के साथ कुछ परेशानी आ गई थी। खैर पुस्तक मिली तो सभी शिकायत दूर हो गई।

मेरी पहली पुस्तक का विमोचन एक ऐसे स्थान पर और अपनों के बीच हुआ जिसकी मैंने कल्पना भी नहीं की थी। उस स्थान और ग्राम नाम हरला का रामलीला मैदान है। वह मेरा पैतृक ग्राम है जहाँ मेरी कुल देवी अंशतः आज भी माँ कामख्या विराजमान हैं। मेरे पैतृक गांव 'हरला' (बिहार राज्य) में सौ सालों से भी अधिक वर्षों से रामलीला का आयोजन होता आ रहा है। जिसमें गांव के ही लोग अभिनय करते हैं। जिस दिन मेरी पुस्तक का विमोचन कार्यक्रम था, उस दिन माँ सीता और भगवान श्री राम का विवाह का अवसर था। हजारों की संख्या में दर्शक उपस्थित थे। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि सम्मानीय श्री धर्मराज पाठक जी भूतपूर्व मुखिया ग्राम पंचायत जागेवरांव, विशिष्ठ अतिथि आदरणीय श्री कन्हैया पाठक जी (अवकाश-प्राप्त फारेस्टर साहब) कार्यक्रम के अध्यक्ष रहे। आदरणीय श्री रामचंद्र पाठक जी, विशिष्ठ अतिथि युवा नेता नीरज कुमार उपाध्याय (गुड्डू जी) और कार्यक्रम की संचालिका, सुश्री जूही पाठक, प्रदेश मंत्री भारत तिब्बत सहयोग मंच बिहार प्रदेश मंचासीन रहे। मेरे पैतृक ग्राम के अलावा पड़ोसी गांव के भी नागरिक उपस्थित रहे। मैं उन सभी जेष्ठ - श्रेष्ठ के श्रीचरणों को बारम्बार नमन करती हूँ उन सभी महानुभावों का हाथ मेरे सर पर सदैव बना रहें, आशीर्वाद मिलता रहे।

माँ कामख्या, मेरी कुल देवी हैं। आज जो भी हूँ, उन्हीं के कृपा से हूँ। उन्हीं की कृपा और आशीर्वाद से उस पावन धरा पर मेरी पहली पुस्तक का विमोचन हुआ। वो कई बार मेरे सपनों में आई है, जिसका जिक्र मैंने इस

पुस्तक में कविता 'दिव्य अनुभूति' के माध्यम से किया है।

"प्रथम माह तृतीय रात्रि, चाँद ने चाँदनी बरसाई ।
तुलसी चौरे से निकलकर, कैसे तुम मेरे पास आई ।
श्वेत वस्त्र सादगी महान , होठों पर मधुमय मुस्कान।
श्वेत मुकुट श्वेत आभूषण, कमल नयन घुंघराले केश।
श्वेत अगस्त कर से हैं झरते, मैने देखा तुम्हारा ये वेश।
और मैने तुम्हें देखा, श्वेत अश्व पर आरूढ़ भी"।

वो मेरे लिए दिव्य अनुभूति थी। अक्षरशः वो स्वप्न आज भी मुझे याद है। आदरणीय श्री विकास शर्मा 'दक्ष' जी (पंचकूला हरियाणा) भारतवर्ष के जाने-माने समिक्षक और साहित्यकार है, जिनके देखरेख मे इस पुस्तक का प्रकाशन हुआ है। उनकी मैं सदैव आभारी रहूँगी कि उन्होंने इस कविता के अनुरूप चित्र लगाया। उस चित्र को देख मैं पुनः उसी स्वप्न में खो गई थी जिसे मैंने पच्चीस वर्ष पूर्व देखा था।

'घटती-घटना' के आदरणीय श्री अविनाश सिंह को विशेष रूप से धन्यवाद देना चाहूँगी कि उन्होंने सर्वाधिक रचनाओं को प्रकाशित किया, जिससे मेरी रचनाओं का प्रचार-प्रसार हुआ। अंत में आप सब गुणी पाठक जनों की भी आभारी हूँ, जो मेरे लेखन को अपने असीम प्रेम और स्नेह से उत्साहित रखते हैं।

सधन्यवाद !

गीता द्विवेदी

गीता द्विवेदी
अम्बिकापुर
छत्तीसगढ़

रेणुका सिंह
RENUKA SINGH

D.O. No. 52(19)/MOS(TA)/20 20

केन्द्रीय राज्य मंत्री
जनजातीय कार्य मंत्रालय
भारत सरकार
निर्माण भवन, नई दिल्ली–110011
UNION MINISTER OF STATE FOR TRIBAL AFFAIRS
GOVERNMENT OF INDIA
NIRMAN BHAWAN, NEW DELHI-110011

दिनांक: 24 जनवरी,2020

संदेश

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि बलरामपुर, सरगुजा, छत्तीसगढ़ की प्राथमिक शाला शिक्षिका, श्रीमती गीता द्विवेदी का एक काव्य संग्रह "**अंतर्मन के कोने से** ..." प्रकाशित हो रहा है। साहित्य ने हमेशा से समाज को चैतन्य और शिक्षित किया है। अगर एक शिक्षिका, एक साहित्यकार भी हो तो मेरा मानना है कि हमारी भविष्य की पीढ़ी शिक्षित होने के साथ साथ संवेदनशील भी होगी, जो कि आज के नये भारत के लिए अवश्य ही एक शुभ संकेत है।

श्रीमती गीता द्विवेदी मेरे संसदीय क्षेत्र सरगुजा, छत्तीसगढ़ की एक उभरती हुई कवियत्री है। श्री गीता द्विवेदी की कविताओं में छत्तीसगढ़ और विशेष तौर पर सरगुजा संभाग की प्रकृति और संस्कृति की एक विशिष्ट छाप है। मुझे पूरा विश्वास है कि आने वाले समय में कवियत्री निश्चय ही अपना और अपने गृह प्रदेश छत्तीसगढ़ का नाम राष्ट्रीय पटल पर अंकित करेगी।

मुझे यह जानकर और भी प्रसन्नता हुई कि पुस्तक का प्रकाशन एक महिला उद्यमी श्रीमती नीलम शर्मा की संस्था '**द इंडियन वर्डस्मिथ**' द्वारा किया जा रहा है। नये भारत में उभरती हुई इस नारी शक्ति को भी मेरा नमन है। मैं, लेखिका श्रीमती गीता द्विवेदी और प्रकाशिका श्रीमती नीलम शर्मा को हार्दिक बधाई देती हूँ और पुस्तक '**अंतर्मन के कोने से** ...' के लिए अपनी शुभकामनाएं प्रेषित करती हूँ।

(रेणुका सिंह)

Room No. 135, C-Wing, Nirman Bhawan, New Delhi-110 011
Phone No. 011-23062153, 23062154, Fax : 011-23062158 (F)
E-mail : renuka.saruta@gov.in

सुश्री अनुसुईया उइके
राज्यपाल छत्तीसगढ़

सत्यमेव जयते

राजभवन
रायपुर - 492001
छत्तीसगढ़, भारत
फोन : +91-771-2331100
फोन : +91-771-2331105
फैक्स : +91-771-2331108

क्रमांक/ 28 / पीआरओ/रास/20/
रायपुर, दिनांक 4 फरवरी 2020

–: संदेश :–

अत्यंत हर्ष का विषय है कि छत्तीसगढ़ की उभरती हुई कवियित्री श्रीमती गीता द्विवेदी की पुस्तक **"अंतर्मन के कोने से"** का प्रकाशन किया जा रहा है।

मैं, आशा करती हूँ कि छत्तीसगढ़ और सरगुजा संभाग की प्राकृतिक सौंदर्य और सँस्कृति पर आधारित यह पुस्तक उनकी कविताओं की अमूल्य संग्रह साबित होगी।

पुस्तक के सफल प्रकाशन हेतु मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ।

(सुश्री अनुसुईया उइके)

क्रमतालिका

क्रमांक	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
1.	देवी वंदना	15
2.	किस्मत का सितारा	16
3.	उमंग एक शाम की	17
4.	बाबा तुम काहे ना आये	18
5.	चार कोने की दुनिया	19
6.	चितचोर कान्हा	20
7.	तीन सहेलियां	22
8.	आज की सीता	23
9.	काशी या स्वर्ग	24
10.	सूनी रंगोली	25
11.	दिव्य अनुभूति	26
12.	कान्हा के दर्शन को	27
13.	कंचन विहंग भारत	28
14.	महान भारत	29
15.	ज्ञान के फूल	30
16.	अमीर की गली	31
17.	नास्तिक	32
18.	बस के इंतज़ार में	33
19.	सीता का प्रकृति प्रेम	34
20.	सज़ा	35
21.	प्यारा बंधन	36
22.	चला गया कान्हा	37
23.	पीड़ा अंज़ान रास्ते की	38
24.	चिंगारी	39
25.	तेरी तलाश में हूँ	40

क्रमतालिका

क्रमांक	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
26.	ये नहीं बदलेंगे	41
27.	सोनचिरइया	42
28.	चाँद भी छुप कर रोता होगा	43
29.	मैं निरर्थक नहीं हूँ	44
30.	निर्दोष	45
31.	खोल बावरी पट स्वगृह का	46
32.	मन क्रंदन कर रहा	47
33.	क्षितिज के उस पार	48
34.	बालिका की ज़िम्मेदारी या मजबूरी	49
35.	गिटटू का पिल्ला	50
36.	सहेली ज़िंदगी	51
37.	नन्ही तारा	52
38.	ईश्वर कहाँ है	53
39.	सरहद नाराज़ है	54
40.	नालायक बेटा	56
41.	पगली	58
42.	जीना चाहता है मन	59
43.	विषधर	60
44.	ऐसी है माँ की लीला	62
45.	माँ तुम सपनों में आया करो	63
46.	अगस्त के पुष्प	64
47.	कितने सेतिका	65
48.	घुँघरूवाली पालकी	66
49.	रावण जलाना, छवि न लाना	67
50.	आख़िरी सलाम बाकी है	68

क्रमतालिका

क्रमांक	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
51.	सोचो ज़रा	69
52.	निर्मोही परिंदा	70
53.	हे अश्वारोही, जरा रुक जाना	71
54.	एक रोटी	72
55.	शीतल नीम की छाया में	73
56.	सुन मयूरा	74
57.	एक बावरी क्या करे	75
58.	मुझे याद है जब तू आई थी	76
59.	खारे पानी का पत्थर	77
60.	ईमानदारी कीमत चाहती है	78
61.	ये कैसा सीखना	79
62.	भाई या शत्रु	80
63.	ये कैसा जहाँ	81
64.	रखती जा गृहलक्ष्मी	82
65.	चाँद और रात	83
66.	शायद वो आती होगी	84
67.	इतनी विनती है तुमसे	85
68.	अनोखा बाज़ार	86
69.	तेरे इस जहाँ से	88
70.	ठंड डराती है	89
71.	महंगाई की कीलें	90
72.	बुद्धू चिड़िया	91
73.	प्रेम तो बस प्रेम है	92
74.	भूख नाचती है	93
75.	भिखारिन रास्ते की	94

क्रमतालिका

क्रमांक	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
76.	सपनों का शीशा गिरा	94
77.	आतंक की पहेली	95
78.	चुभते चेहरे	96
79.	ख़ुदा को पसंद है	97
80.	मेरी ख़ुशी	98
81.	गुरु	99
82.	हरे पत्तों के हरे मोती	100
83.	सावधान ! अमन के लूटेरो	101
84.	मैं सरगुज़ा की बेटी हूँ	102

देवी वंदना

आदिशक्ति सब जीव जगत को, अपनी विमलता दीजिए।
शिशु सा निश्छल मन हो मेरा, इतनी सरलता दीजिए।

हे देवी माँ जगत भवानी, कमलविहारिणी शारदे।
तेरी विनती सब विधि करती, तम भव से मुझे तार दे।
शुभ प्रयास हो हर क्षण मेरा, उसमें सफलता दीजिए।
शिशु सा निश्छल मन हो मेरा, इतनी सरलता दीजिए॥

सब जीवों में तुमको देखूँ, मान हृदय से दूर रहे।
सद्भावना समाहित मन में, नेह भाव भरपूर रहे।
पुष्प लजाए नमन करूँ जब, विनय कोमलता दीजिए।
शिशु सा निश्छल मन हो मेरा, इतनी सरलता दीजिए॥

तेरा दर्शन हितकारी माँ, पूजा अब स्वीकार करो।
द्वार खड़े विनती करते हैं, हम सबका उद्धार करो।
सदगुणों का विकास निरंतर, उर में तरलता दीजिए।
शिशु सा निश्छल मन हो मेरा, इतनी सरलता दीजिए॥

किस्मत का सितारा

जो बदले रंग पल-पल,
फलक पे ऐसा कोई सितारा नहीं।
कर दे अपनी चमक, तेज और धुमिल,
आसमां को भी, ये गवारा नहीं।
इंसान की किस्मत का, सितारा भी,
तेज चमकता और धुंधलाता नहीं।
अगर होता तो, ज़मीं पर उतरते ही,
कन्या रत्न और कुल दीपक के,
नाम से नवाजा जाता नहीं।
हाँ, समय के काले-उजले बादलों से,
ढ़का-ढ़का नजर आता है।
यह भी उपर वाले की,
विचित्र लीला का, एहसास कराता है।
इस सितारे को, जीवन पटल पर,
चमक बिखेरने के लिए,
सत्कर्म और लगन के,
मदद की जरूरत होती है।
जो ये बात कर समझ जाए,
फिर तो सारा जहाँ क्या,
हसीं जन्नत भी उसकी होती है।।

उमंग एक शाम की

मन मेरा मचल रहा है, कोई गीत गुनगुनाने को।
चाँद गगन पर हँस रहा है, उसे धरा पर लाने को।
मन मेरा .....

तुषार बिन्दु की कतारें, आज मैं सँवार दूँ,
पाँव भी थिरक उठे हैं, घुंघरू को क्या श्रृंगार दूँ,
तरंग जल उछाल कर, तरंगिणी को पछाड़ने को।
मन मेरा मचल रहा है, कोई गीत गुनगुनाने को ॥

पवन प्रभाव से अब तक रोम-रोम सिहर रहा है,
कली कहीं चटक गयी, शायद भौंरा गुजर रहा है,
फूलों पर इतराकर, पावस में मधुमास लाने को।
मन मेरा मचल रहा है, कोई गीत गुनगुनाने को ॥

किरण, पंखुड़ी सिमटकर, गले का हार बन गई,
चम्पई उजाले से, अंधेरी रात भी संभल गई,
शनै: शनै: सतरंगी पंख, मयुर से चुराने को।
मन मेरा मचल रहा है, कोई गीत गुनगुनाने को ॥

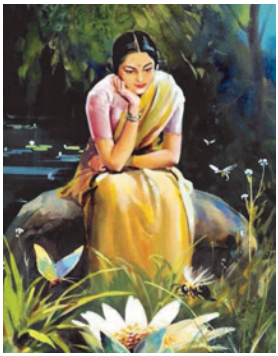

बाबा तुम काहे ना आए

दिन तो कैसे भी बीत गया, रात न जल्दी जाए,
बाबा तुम काहे ना आए।
कह कर गये थे मुझसे, जल्दी ही लौट आउंगा,
हरी चूड़ियाँ, सुन्दर गुड़िया, मीठे बताशे लाऊंगा,
शाम अब ढल गई, रात भी डराने लगी,
तुम्हारी बिटिया बहुत, अंधेरे से घबराने लगी,
पंक्षी भी अपने-अपने, घोसलों में सिमट आए,
बाबा तुम काहे ना आए॥
दरवाजे पर बैठी मैं, तुम्हारी राह देख रही हूँ,
सूने आंगन के खाट पर, जैसे तुमको देख रही हूँ,
अम्मा की गोद छूट गई थी, जब चलना भी न जाना था,
चली गई इस दुनिया से ,वापस उसे न आना था,
तुम्हारा हाथ मेरे सर पर हो, याद तुम्हें बस रह जाए,
बाबा तुम काहे न आए॥
माँ की ममता मैंने तो, तुम्हीं से है जाना था,
याद किया था मैंने जो, गीत तुम्हें सुनाया था,
तुम आए न खबर आई, न निंदिया मेरे पास आई,
झिंगुर गुनगुना रहा है, दिया टिमटिमा रहा है,
साथ वही निभा रहा है, हवा न आ के बुझा जाए,
बाबा तुम काहे न आए॥

चार कोने की दुनिया

बाबा ने ब्याह रचाया, तब तक थी गोल दुनिया।
आँगन से उनके जाते ही, हो गई चकोर दुनिया।
पहले थी एक ही दुनिया, अब हो गई दो दुनिया।
धीरे चलना, धीरे बोलना, पायल का धीरे बजना,
धीरे-धीरे अब हँसना, कंगने का धीरे खनकना।
धीरे-धीरे होते-होते, मेरी धीमी हो गई दुनिया।
चार कोने की दुनिया में, घुंघट भी पहरेदार बनी,
गौरेयों से कुछ बातें कर लूँ, वही मेरी राजदार बनी।
सपने भी आँखों में, संभल कर हैं आने लगे,
हरदम उड़ना चाहा था, पंख भी डराने लगे।
बाबा के बगिया का झूला, मुझको न बुला रहा है,
अम्मा को मेरी याद का, गुलशन न सता रहा है।
देखा नहीं है बरसों से, धान की बालियाँ लहराते,
चन्दा की अठखेली देखी, सूरज न देखा उग आते।
मुझको तो भाती है सिर्फ गोल-गोल बड़ी दुनिया।
सबके लिए होनी चाहिए, अब सिर्फ एक ही दुनिया॥

चितचोर कान्हा

सबकी उंगली उठ रही हैं, तेरी ओर आज कान्हा ।।
राधा डटी है अब भी, मेरे मन की मीत कान्हा ।
करें शिकायत आ के गोपियाँ, तेरी मईया यशोदा से ।
चुपके-चुपके राधा देखे, महल के झरोखा से ।
उसकी कजरारी आँखे कहती हैं, तू निर्दोष है कान्हा ।
सबकी उंगली उठ रही हैं, तेरी ओर आज कान्हा ।।

छलिया कपटी, है चितचोर, माखन चोर कहलाता है ।
कदम के नीचे बांके बिहारी, बन के बंसी बजाता है ।
तुझको डाँट खिलाने को सभी अड़ के खड़ी हैं ।
तूने जब मुस्करा के देखा, भूल गयीं सब ताना ।
सबकी उंगली उठ रही हैं, तेरी ओर आज कान्हा ।।

क्या कहना है, क्या नहीं, उन्हें न सुझ रहा है।
खो रही हैं सुध-बुध अपनी, मन नैनो में डूब रहा है।
प्रीत और उलाहने का, कैसा है ताना-बाना।
चोर है ये तो मालुम था, जादूगर है आज जाना।
सबकी उंगली उठ रही हैं, तेरी ओर आज कान्हा ।।

दुनिया बनाने वाला, माखन को मचल रहा है।
ब्रम्हांड जिसमें समाया, बाल रूप में खिल रहा है।
बंसी बजा के तूने, सबको जैसे जगाया है।
तेरे जादू का राज़, आज गोपियों ने जाना।
सबकी उंगली उठ रही हैं, तेरी ओर आज कान्हा ।।

तीन सहेलियाँ

चल ख़ुशबू किसी और शहर में, वहाँ अपना जहाँ बना लेना।
हमें भूल जाना मगर, औरों का जीवन महका देना।
चल ख़ुशबू.....॥
गाँव, गली और आंगन-आंगन, होगा जहाँ सुन्दर सा उपवन,
उस उपवन के फूलों में, तू अपना मकां बना लेना।
चल ख़ुशबू.....॥
तू जाएगी तो तेरे संग-संग, तेरी सखियाँ भी तो जायेंगी,
धूप, हवा के साथ-साथ, एक नया आशियाँ बना लेना।
चल ख़ुशबू.....॥
हवा से कहना सनन-सनन, वो सबको गीत सुनाएगी,
धूप से भी सबके तन में, ऊर्जा भरने का कह देना।
चल ख़ुशबू.....॥
किस दिशा में तुझको जाना, अब तक नहीं है तुने जाना,
कैसे ढूँढेगी तू मंज़िल, ज़रा मुझको भी बतला देना।
चल ख़ुशबू.....॥
अनंत काल से आज तलक़, कैसे मिल कर रहती हो तुम,
इस शहर के लोगों को भी, अपना ये हुनर सीखा देना।
चल ख़ुशबू.....॥
शायद कभी जीवन से थककर, मृत्यु निंदीया को बुला बैठूं,
तो तुम तीनो आकर मुझको, फिर से गले लगा लेना।
चल ख़ुशबू.....॥

आज की सीता

राम के साथ सीता वन को चली,
मर्यादा के मोती संजोकर चली।
सर्वस्व सुखों का त्याग किया,
पति चरणों में अनुराग किया।
उंगली न उठी कोई उन पर,
पत्नी धर्म निभा रही थी तब।
एक सीता आज भी चली है,
पति का साथ निभाने को।
कर्तव्य सूली पर चढ़ जाने को।
उस सीता का गुणगान किया ग्रंथो ने,
इस सीता का उपहास किया अपनों ने।
राह में रोड़े बिछाते रहे, हँसते रहे,
सुख की राह खोजती, कहते रहे।
तोड़ पाया न कोई भी उसके,
मनोबल की दृढ़ चट्टान को।
पाकर रही वो जो चाहा था,
पाकर रही अपने लक्ष्य महान को।
न लौटाना था, न वह लौटी,
मान लौटा, प्रतिष्ठा उसकी लौटी।
उठा के सर जीया अब,
खोई पहचान, उसकी लौटी।
युग बदले चाहे कितने,
नीयत इंसान की बदलती नहीं।
पर सीता किसी युग में,
अपने आप को बदलती नहीं।

काशी या स्वर्ग

मैं स्वगृह में बैठकर, स्वर्ग की कल्पना करूँ।
या काशी के घाट पर बैठ, शिव की नित्य अर्चना करूँ।

अदृश्य आलोकित जग में, यूँ ही भ्रमण करता रहूँ।
या पुलकित रवि और जाहन्वी का दर्शन करूँ।

मैं कल्प वृक्ष से प्रतिपल, कुछ पाने की याचना करूँ।
या गंगा तीर के तरूओं से, अध्यात्म फल की कामना करूँ।

स्वर्ग के भव्य कक्ष में, अपने को परतंत्र करूँ।
या काशी के रजकण को, माथे से लगाकर मुक्त बनूँ।

स्वर्गीय अप्सराओं के रूप, नर्तन में लिप्त रहा करूँ।
या गंगा घाट के आरती का, अमृतपान मैं किया करूँ।

या तो मैं दुख कष्ट से, मुक्त जीवन वरण करूँ।
या शिव दर्शन के लिए, व्याकुल होकर घूमा करूँ।

क्या अच्छा है, क्या नहीं, नहीं जानना मुझको अब।
ज्ञान चक्षु खुल चुके हैं, पलकें बन्द न करना अब।

शिव का दर्शन और मनन, शिव-शिव जब मैं किया करूँ।
नहीं चाहिए सुख और शक्ति, नहीं चाहिए मोक्ष और मुक्ति।
शिव भक्ति की उपवन में, पुष्प बनकर खिला रहूँ।

सूनी रंगोली

लड्डू, पेड़े, रसगुल्ले, और मीठी रबड़ी याद है।
माँ के हाथों की बनी मिक्चर-मठरी भी याद है।
वो हर बरस, दीपावली के आते ही,
दीवारों पर सफेद, नीले रंगो का चढ़ना याद है।
घर-आंगन गोबर-मिट्टी से पुत जाना भी याद है।
आँगन के तुलसी चैरे पर रंगोली बनना भी याद है।
नये कपड़े, कंगना-बिंदी, अनार, फुलझड़ियाँ याद है।
शाम को सब के चेहरे का ख़ुशी से खिलना याद है।
एक दीपावली ऐसी आयी, घर में है विरानी छायी।
अबकी बार न जाने क्यों, मेरी माँ बहुत बीमार है।
छोटी उम्र और बाल मन, मुझको तो समझ न आता है।
सबकी माँए घूम रही, मेरी माँ से बैठा न जाता है।
भरी-भरी आँखो से वो, हम सबको ताका करती है।
कांपते हाथों से पास बैठाकर, वो मेरा माथा चूमा करती है।
अबकी बार दीवारें सूनी, घर भी सूना-सूना है।
आंगन तो पुत गया है, रंगोली का न नमूना है।
बाबा से कुछ पूछ न पायी, वो भी बहुत उदास हैं।
उनका आंगन के खाट पर चुप-चुप बैठना याद है।
एक लड़की का बचपन भी एकदम से खोना याद है।
दब गई इच्छाएँ कहीं, कुचल गई आशाएं है।
मन में उसके अब कोई भी चाह न होना याद है।
दीवाली अब भी आती है, रंगोली अब भी बनती है।
पर बचपन का सुना आंगन, सूनी रंगोली अब भी याद है।

दिव्य अनुभूति

प्रथम माह तृतीय रात्रि, चाँद ने चाँदनी बरसाई।
तुलसी चैरे से निकलकर, कैसे तुम मेरे पास आई।
श्वेत वस्त्र, सादगी महान, होंठों पर मधूमय मुस्कान।

श्वेत मुकुट, श्वेत आभूषण, कमल नयन घुँघराले केश।
श्वेत अगस्त कर से हैं झांकते, मैंने देखा तुम्हारा ये वेश।

और मैंने तुम्हें देखा, श्वेत अश्व पर आरूढ़ भी।
मंदिर और चित्रों में देखा, सिंह पर विराजित भी।

स्वप्न या जागृत में देखा आज तक न समझ सकी।
तुम्हारे नैनों की भाषा को, अब तक न मैं पढ़ सकी।

इतना ही जानती हूँ कि, तुम अब मेरे पास हो।
रूप वही फिर दिख जाये तो, साँसों में साँस हो।
एक बार फिर दर्शन दे दो, पूरी हर अभिलाष हो।।

कान्हा के दर्शन को

कान्हा के दर्शन को तरसे नज़रिया,
खीचती है मुझको उसकी मुरलिया।

जाऊँ भी कैसे, चैन पाऊँ भी कैसे,
जागूँ भी कैसे, सो जाऊँ भी कैसे,
सास ननद को समझाऊँ भी कैसे,
अभी तो हूँ मैं नई बहुरिया।
कान्हा के दर्शन को .... उसकी मुरलिया।

खिड़की से देखूँ, झरोखे से देखूँ,
ऊँची अटरिया के कोने से देखूँ,
खेलता है शायद वो गलियों में,
कैसे मिलेगी अब उसकी खबरिया।
कान्हा के दर्शन को .... उसकी मुरलिया।

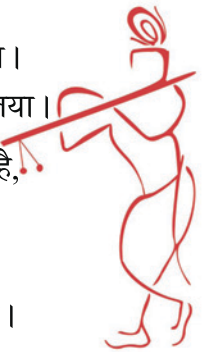

छोटी ननदिया के अजब ही ठाठ है,
करती न बात है देती न साथ है,
नखरे दिखाती, चले बलखाती,
बताती न कैसा है कृष्ण सांवरिया।
कान्हा के दर्शन को .... उसकी मुरलिया।

करना पड़ेगा कोई स्वांग मुझको,
पीनी पड़ेगी बूटी भांग मुझको
बन के चलूँ मैं खिलौने वाली,
या बन जाऊँ अल्हड़ गुजरिया।
कान्हा के दर्शन को .... उसकी मुरलिया।

कंचन विहंग भारत

कंचन विहंग मेरा भारत,
बैठा रहता हीरक शाख पर।
अनार दाने चुनता रहता,
पंख पसारता आसमान तक।
चहचहाता मधूर ध्वनि से,

खिलखिलाता रहे पाँख पर।
सिर उठाता पर्वत झुककर,
सिर झुकाता ऋचाएं गा कर।
अपनी चोंच में रखता है,
सूरज की लाली छुपाकर।
इसके विशाल दो पंजों को,
धोता नीला नीला सागर।
छोटे-बड़े अन्य पंक्षी,
इसकी ओर ताकते रहते हैं।
इसकी दमकती आँखों की,
रोशनी नापते रहते हैं।
और ये सत्याचरण से,
स्वमान बढ़ाता रहता है।
तीन रंग की कलगी,
हरदम फहराता रहता है।

महान भारत

लहराएगा तिरंगा युगों तक आसमाँ पे,
ये बात हिमालय ने बताई अब भी है।
कामयाब दास्ताँ लिखता रहेगा भारत,
वक़्त की दवात में रोशनाई अब भी है।
आजादी से पहले ही शहीद न होते थे,
कितनों ने देश पर जाँ लुटाई अब भी है।
कोई जन्म न लेगा जो बाँट सके देश को,
ये बात काश्मीर ने समझाई अब भी है।

सोया कब था भारत जो जागेगा,
योग, शंख ध्वनि ने बताई अब भी है।
मेरा देश तो महान है, महान ही रहेगा,
कैलाश, सचिन, सायना ने,
ये सबको महसूस कराई अब भी है।
लहराएगा तिरंगा युगों तक आसमाँ पे,
ये बात हिमालय ने बताई अब भी है।

ज्ञान के फूल

शाला की फूलवारी में,
नन्हे-मुन्नों की किलकारी में।
ज्ञान के फूल खिला दूँ मैं,
शिक्षक और विद्यार्थी का,
रिश्ता सार्थक बना दूँ मैं।
कोई खिलदंड़, जैसा बन्दर,
कोई शांत, जैसा समुन्दर,
कोई बाहर, कोई अन्दर,
रहना है अब अनुशासन में,
ये सबको समझा दूँ मैं।

चुन्नी की चोटी ढ़ीली-ढ़ाली,
मुन्ना ने टाई न बांधी,
दोनो मिल कर न करे पढ़ाई,
सीखेंगे सब धीरे-धीरे,
मन को जरा समझा लूँ मैं।
बोझिल न हो जाए शिक्षा,
अब न डराए उन्हे परीक्षा,
खेल-खेल में पढ़ लिख जाएं,
पूरी हो उनकी भी इच्छा,
ऐसा समाधान निकालूँ मैं।
शिक्षक और विद्यार्थी का,
रिश्ता सार्थक बना दूँ मैं।

अमीर की गली

इस गली से मत गुज़रना, यहाँ सिर्फ अमीर रहते हैं।
तुम हो सीधी-सादी सूरत में, यहाँ तुम्हें कोई न पहचानेगा,
कहने को तो तुम जैसों को, वैसे सब गरीब कहते हैं।

तुम तो किसी पेड़ तले, बैठ पसीना सुखाते हो,
ईट-पत्थरो में अपनी, दुनिया तलाशते हो,
महलों के नक्शे तो, सपनों में शरीक रहते हैं।

तुमसे ज्यादा इज्जत, जानवर भी पाते हैं।
चमचमाती थाली में खाकर, गाड़ी में बैठे नजर आते हैं।
उनके पास मत फटकना, वे भी खुद को शरीफ़ कहते हैं।

कपड़ो की चमक से, नजर बदल जाती है,
तुम्हारे मैले कपड़ों से, मेहनत की महक आती है,
फिर खुशियाँ दूर भागती,और गम क़रीब रहते हैं।
इस गली से मत गुज़रना,यहाँ सिर्फ अमीर रहते हैं।

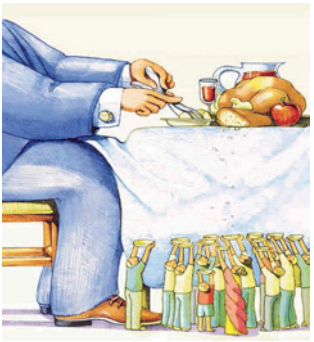

नास्तिक

लोगों ने दिया है,
नास्तिक नाम मुझको,
अब इससे खुद को,
दूर करूँ तो कैसे ?
कैसे है ईश्वर,
इसका रंग और रूप,
जाति और धर्म,
मैं जान सकूँ कैसे ?
जिस मूरत ने अब तक,
कोई हरकत न की,
उसके चौखट पर,
सर रखूँ भी तो कैसे ?
पेड़ भी हवा से,
हिल ही जाते हैं,
बेजान पत्थरों को,
पूजूँ भी तो कैसे ?
देख ही लिया उसको,
अपनी माँ की आँखो में,
पर ये बात मैं सबको,
समझाऊँ भी तो कैसे ?

बस के इंतजार में

मैं खड़ा हूँ सड़क किनारे,
बस के इंतजार में खड़ा हूँ,
दादा जी की उंगली थामें,
मुझसे ज्यादा उन्हें जल्दी है,
मुझे बस में बैठाने की,
समय पर स्कूल पहुँचाने की,
पर मुझे जल्दी नहीं है,
मैं आराम से खड़ा हूँ,
देख रहा हूँ रास्ते की,
दौड़ती-भागती गाड़ियों को,
सोच रहा हूँ दादा जी को,
इन्हें भी तो बस पकड़नी है,
बहुत दूर जाने वाली बस,
पर इसकी इन्हें चिन्ता नहीं,
इनके दादा अब जिन्दा नहीं,
इन्हें तो खुद ही चले जाना है,
और वापस भी नहीं आना है,
जीवन की राह पर मुझे,
सरपट दौड़ते देखने के लिए,
ये व्याकुल होते रहते हैं,
सर के सफेद बालों पर,
यूं ही हाथ फेरते रहते हैं,
दोनों की बसों ने देर लगाई है,
अभी बस नहीं आयी है।

सीता का प्रकृति प्रेम

सीता तुमने गौरी माँ से,
कितने वरदान मांगे थे?
राम को वर चाहा था,
संग में वनवास भी,
क्या तुमने मांगा था ?
क्या प्रकृति प्रेम,
कुछ ज्यादा था,
या पशु और पक्षी,
तुमको बहुत भाते थे।
राम से मिली उपवन में,
राम के संग फिर,
वन में ही गई।

लंका में भी तुम,
वाटिका में ही बैठी,
वनभूमि ही तुम्हारी,
फिर कर्म स्थली बन गई।
धरती से जन्म लिया,
धरती में ही समा गई।
नारी का तुम फिर ये,
कौन सा रूप दिखा गई ?
कभी-कभी तो मुझको,
भ्रम सा हो जाता है।
धरती में है सीता,
या सीता ही धरती माता है।

सजा

महल के विशाल कक्ष में,
कुछ चमकीली आँखें,
निरंतर घूरती रहती हैं,
दीवार पर लगी तस्वीरों को,
जैसे कुछ पूछती रहती हैं,
तुममें हममें क्या अन्तर हैं ?
दोनों महल के अन्दर हैं,
तुम भी सजी दीवार पर,
हम भी सजे दीवार पर,

तुम्हें देखने सब आते हैं,
हमें देखने सब आते हैं,
देख कर आगे बढ़ जाते हैं,
और हम ताकते रह जाते हैं,
आखेट तुम्हें भी प्यारा था,

आखेट हमें भी प्यारा था,
तुम्हारे लिए मनोरंजन था,
हमारे जीवन का सहारा था,
तुमने तो मार डाला हमें,
दीवारों पर सजा दिया,
इसकी तुम्हें किसने सज़ा दी
हमारे साथ ही सजा दिया।

प्यारा बंधन

मैं तो अब सदा रहूँ, तेरे उर आँगन में।
बांध सांवरिया मुझको भी, ऐसे प्यारे से बंधन में।
छूटे चाहे सारी दुनिया, छूटे न तू इस जीवन में ॥

बजाता है हरदम बंसी, घूम-घूम कर मधुबन में।
बसता है हर गीत में तू, हर धुन में, हर सरगम में।
छूटे चाहे सारी दुनिया, छूटे न तू इस जीवन में ॥

ऐसा कौन सा धागा था, जिससे मीरा को बांधा था।
बंध जाऊँ मैं उसी धागे से, रहूँ तेरे उर आँगन में।
छूटे चाहे सारी दुनिया, छूटे न तू इस जीवन में ॥

तेरी प्रीत की डोरी से, राधा भी ऐसे बंध गई थी।
जैसा कोई कली सकुचाए, बरसते-लरजते सावन में।
बांध सांवरिया मुझको भी, ऐसे प्यारे से बंधन में।
छूटे चाहे सारी दुनिया, छूटे न तू इस जीवन में ॥

चला गया कान्हा मेरा

चला गया कान्हा मेरा, पर मैंने उसे भुलाया ना।
कैसे रखूँ हृदय पर पत्थर, किसी ने मुझे समझाया ना।
चला गया कान्हा मेरा, पर मैंने उसे भुलाया ना।

न मेरी सखियाँ आयीं, किसी ने मंगल गाया ना।
हीरे-मोती अपने हाथों से, मैंने अभी लुटाया ना।
चला गया कान्हा मेरा, पर मैंने उसे भुलाया ना।

लोरी भी मैंने गायी नहीं, थपकी देकर सुलाया ना।
आंसू भरी मेरी आँखे थीं, चेहरा भी उनमें छिपाया ना।
चला गया कान्हा मेरा, पर मैंने उसे भुलाया ना।

कौशल्या को मालूम था, एक दिन राम आयेगा।
मेरा कान्हा कब आएगा, ये भी तो मुझे बताया ना।
चला गया कान्हा मेरा, पर मैंने उसे भुलाया ना।

विधना तूने ऐसा खेल, पहले भी रचाया क्या ?
छीन मुझसे मेरा सहारा, तू भी तनिक पछताया ना।
चला गया कान्हा मेरा, पर मैंने उसे भुलाया ना।

पीड़ा अंजान रास्ते की

(मृत्यु का अनुभव)

मैं कहाँ जा रहा हूँ, मैं खींचा जा रहा हूँ,
एक अंजान रास्ते पर, फिसलता जा रहा हूँ।
कंटीले सिलवटों पर,
अनंत शून्य किस कदर, मुझे घेरते जा रहे है,
घेर कर मुझे भी, शून्य करते जा रहे हैं।
कुछ काले स्याह साये, मेरे करीब आ रहे हैं,
कुछ राह रोकते हैं, कुछ पास बुला रहे हैं।
चारो तरफ घनी, गहरी, अंधियारी कैसी छाई हैं,
ये कैसा पर्वत है, ये कैसी खाई है।
कुछ-कुछ समझ रहा हूँ, मैं कहाँ जा रहा हूँ,
जहाँ से कोई आता नहीं, शायद वहीं जा रहा हूँ।
उंचे पर्वत से गिरूंगा, गहरी खाई से लुढ़कुंगा,
कभी नहीं उठुंगा और, कभी नहीं निकलुंगा।
पर मुझे नहीं जाना, पर्वत खाई के बीच में,
मैं रहना चाहता हूँ, सिर्फ अपनों के बीच में।

चिंगारी

चिंगारी की फितरत का क्या कहना,
दबी रहती है राख के ढ़ेर में।
न बाहर की दुनिया देखने की चिन्ता,
न गर्म राख में दबने की चिन्ता।
अब न उसे बुझने की चिन्ता,
और न जल उठने की चिन्ता।
न अकेलेपन से उबना सीखा,
न ही भीड़ में रहने की चिन्ता।
किसने उसे दबाया राख में,
क्यों दबाया उसे क्या चिन्ता।
आनन्द आता है बस दबे रहने में,
एहसास सुखद है राख के ढेर का।
अपनी चमक उसे दिखती नहीं,
अपना जतन वह करती नहीं।
पर हवा उसे ढूंढ़ ही लेगी,
उसकी चमक बिखेर ही देगी।
अपनी चमक जब देख लेगी,
चिंगारी फिर कभी न दबेगी।
इतनी चमक बिखेरेगीं वो,
तारों को ज़मीं पर रोक लेगी।

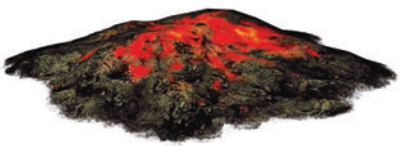

तेरी तलाश में हूँ

गोधूली बेला, लम्बी पगडंडी,
धूल उड़ी, गौओं के पग से,
पदचाप की आहट सुनकर,
खूंटे की रस्सी ताक रही है।
चितकबरी बिल्ली भी कब से,
छींके पर बैठी झांक रही है।
उपलों से धूएं निकल कर,
छप्पर पर मंडराने लगे।
कौवों-गौरेयों के झुण्ड,
घोंसलों में छुप जाने लगे।
सूनी रात और सूना आँगन,
झींगुर गीत गाने लगे।
कल फिर ऐसी ही शाम होगी,
सूना-सूना दिन होगा।
और रात भी वीरान होगी,
और ये ठहरा सा जीवन,
आस-निराश के बादल,
छा जाते हैं यदा-कदा,
रंग बदलती शाम की आस में हूँ,
आज भी मैं तेरी तलाश में हूँ।

ये नहीं बदलेंगे

बिखेर दे माली, बाग़ के फूलों को।
चुन लेने दे उन्हें, जो इनके तलबगार हैं॥

कुछ लोगों को पसंद है, चटख रंग इनके।
कुछ इनकी खुशबू के, ही राज़दार है॥

इनके बिखरने का, तू अफसोस न कर।
इनकी नज़ाकत ही, इसकी जिम्मेदार है॥

खिलना-मुरझाना, यही इनकी फितरत है।
तू इनका ज्यादा, साज संवार न कर॥

कुछ मिट्टी में मिले, कुछ फ़िज़ां में बिखर जाएं।
तू इनके नसीब पर, मलाल न कर॥

धूप में खिलना, काँटों के बीच रहना।
बदलेंगे न खुद को, इंतजार न कर॥

इनके मिट जाने पर, आँसू न बहाना।
जब तक रहें, खिले रहें ऐसा इंतजाम तूकर॥

बिखेर दे माली, बाग़ के फूलों को।
चुन लेने दे उन्हें, जो इनके तलबगार हैं॥

सोनचिरइया

अरे चिट्ठियाँ तू कहाँ गई, मेरी सोनचिरइया कहाँ गई।
तू तो उड़ती ही रहती थी, द्वार-द्वार फुदकती थी,
तुझे पकड़ने को सखियाँ, द्वार पर लपकती थी,
तू जो हमसे करती थी, वो प्यारी बतियाँ कहाँ गई,
मेरी सोनचिरइया कहाँ गई ॥

नीले-पीले पंखों को तू, फडफड़ाती रहती थी,
कभी दुःख की आहें भरती, कभी ख़ुशी से चहकती थी,
तेरे दुःख की आहें, सुख की पुरवैया कहाँ गई,
मेरी सोनचिरइया कहाँ गई ॥

सूरज के पूर्ण चमकते ही, तू आँगन में आ जाती थी,
दीदी, मौसी, अम्मा की, आँखों में चमक ले आती थी,
सबके मन की बातें कहती, चुलबुली चिरइया कहाँ गई,
मेरी सोनचिरइया कहाँ गई ॥

मिलने का पता, विरह की घड़ी, तू बताती रहती थी,
बड़ी लगन से रिश्तों के, धागे बुनती रहती थी,
कहाँ लिया तूने बसेरा, कौन सी टहनी तुझे भा गई,
मेरी सोनचिरइया तू कहाँ गई ॥

चाँद भी छुप कर रोता होगा

चाँद भी छुप कर रोता होगा,
अपने चेहरे के दाग पर।
या उसे छिपा लेता होगा,
मुस्कराहट के पर्दे में।
लताएं भी रोती होंगी,
अपने तन पर उग आए
निष्ठुर कांटों को देख कर।
या उनसे मुँह फेरकर,
कोमल कलियों को अंक,
में भर खुश हो लेती होंगी।
सागर क्या चिढ़ जाता होगा ?
रेत के रूखे बिछौने से।
या सीप मोतियों के संग,
खेल-खेलकर अपना,
बाल मन जगाता होगा।

नभ भी क्या काले मेघ से,
जान छुड़ाता फिरता होगा ?
या चाँद-तारों के संग,
स्वप्न संसार सजाता होगा।
पुष्प क्या काले भ्रमर से,
दूर रहना चाहता है।
या उसके मधुर गुंजन,
को सुन प्रसन्न रहता है।
हम क्यों नहीं समझते ?
हम क्यों नहीं सुधरते ?
क्यों बुराई को कोसते रहते हैं ?
क्यों नहीं सब भूलकर,
अच्छाई को गले लगाते हैं ?
आखिर क्यों नहीं ?

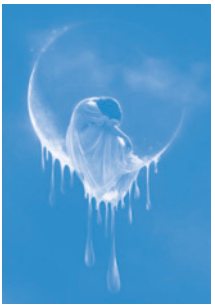

मैं निरर्थक नहीं हूं

रिमझिम सावन, मधुर मधुमास,
मधुर राग, मधुर स्वर संगम।
मधुर आगम, मधुरतम स्वागत,
क्यों चातक सा तृषित रहूँ।
शलभ भीग रहा दीप रश्मि से,
लुटा रहा विराग चिर संचित।
क्यों समझूँ स्वयं को पराजित,
क्यों मृत्यु का आलिंगन करूँ।
इस बोध से नहीं हूँ अनभिज्ञ,
कि निरर्थक नहीं हूँ सृजित।
अंतिम पीड़ा है बहुत दूर,
क्यों प्रतिपल भयभीत रहूँ।
चिन्ता नहीं, सुख सुसुप्त है,
गर्म रेत जैसे तपते हैं क्षण।
व्याकुल हृदय प्रेम पिपासित,
मृग-मरीचिका सा भ्रमित रहूँ।
उच्च प्रदिप्त ज्योति बिन्दू पर,
है पूर्ण अधिकार मेरा भी।
संतोष मणि और ज्ञान रतन
पाकर अति आनन्दित रहूँ ।

निर्दोष

हमने तो प्रेम का सबक, सीख रखा था बचपन से।
एक शख्स आया अचानक, नफरत करना सीखा गया।

हमने तो ख्वाब में भी दुआ देना ही सीखा था।
गहरे जख्म देकर उसने बददुआ देना सीखा दिया।

इस कदर परेशान हुए उसकी दुखती हरकतों से।
क्षमा शब्द भी दिल में, आने से पहले फिसल गया।

तड़पाने का वर मांग कर, जन्म ही लेते हैं कुछ लोग।
ऐसा ही कोई था जो हमें, सताने का हुनर दे गया।

नफरत की आग को हम, बुझाने की कोशिश करते रहे।
पता भी नहीं चला कि कब ये दावानल बन गया।

सजा देने को सोचते हैं अपने पर हुए सितम पर।
निर्दोष रहेगे जीवन भर, खुदा को दिया ये।
वचन याद आ गया, फिर से याद आ गया।

खोल बावरी पट स्वगृह का

खोल बावरी पट स्वगृह का, बाहर ज़रा निकल कर देख ।।
आ गई हूँ द्वार पर तेरे, मुझे जरा निरख कर देख ।
लाल चुनर में कैसी लगती हूँ, लाल ओढ़नी ओढ़ रखे हैं ।
बिजली चमकने का भ्रम न करना, मेरी बिंदिया चमक रही हैं ।
बादल न कहीं गरज रहे है, मेरी पायल छनक रही हैं ।
मुझको जरा निरख कर देख।
खोल बावरी पट स्वगृह का, बाहर ज़रा निकल कर देख ।।

तेरे घर में एक मंदिर है, मंदिर में एक सुन्दर आसन है,
तेरे घर मंदिर मन मंदिर के आसन पर मेरी ही मूरत है ।
मूरत और मुझे एक साथ, घर में तू बैठा कर देख।
खोल बावरी पट स्वगृह का, बाहर ज़रा निकल कर देख ।।

तू जिसकी पूजा करती है, निश-दिन नाम जपा करती है।
बागों से तू फूल तोड़कर, जिसके लिए माला गूँथती है।
उस गमकती सुन्दर माला को, मुझे जरा पहना कर देख
खोल बावरी पट स्वगृह का, बाहर ज़रा निकल कर देख ।।

गोटे सितारे जड़-जड़ कर तुने जो चुनरी बनाई है ।
आज घर के आँगन में, रंगोली भी तो बनाई है ।
चन्दन केसर का टीका, माथे पर मेरे लगाकर देख ।
खोल बावरी पट स्वगृह का, बाहर ज़रा निकल कर देख ।।

मन क्रन्दन कर रहा

मुझे निश्चेतन से,
चेतन बनाने वाले,
मुझे छोड़ कर न जाओ।
मन क्रन्दन कर रहा है,
जरा तो तरस खाओ।
हमेशा साथ निभाया था,
अब छोड़कर न जाओ।
अपने दमकते चर्म पर,
गर्व था मुझे बहुत।
अब सफेद वस्त्र पहनुंगा,
फिर अग्नि में जलुंगा।
मुझे जलना, मिटना नहीं,
आकर अब बचाओ।
ये पंचभूत मिलकर,
मुझको खीच लेंगे।
मिटा देंगे मेरी हस्ती,
स्वयं में समेट लेंगे।
इस सुन्दर संसार में,
अभी रहना चाहता हूँ,
ये बात समझ जाओ।
अनेक रिश्तों में बंधा हूँ
बंधा ही रहने दो।
सोना चाहता नहीं,
जागृत ही रहने दो।
वापस लौट आओ तुम,
और मुझमें समा जाओ।
मुझे निश्चेतन से,
चेतन बनाने वाले,
मुझे छोड़ कर न जाओ।
मन क्रन्दन कर रहा है,
जरा तो तरस खाओ,
अब छोड़ कर न जाओ।

क्षितिज के उस पार

चलो क्षितिज के उस पार,
बैठेंगे तुम और हम।
एक सुनहरी लकीर पर,
लकीर के उस पार तो,
आसमान के छत पर,
थोड़ी देर टहल लेंगे हम।
शायद वहाँ कभी हमें,
इन्द्रधनुष दिख जाए,
वर्षा की शीतल बूंदें,
आकर गालों पर गिर जाएं।
या फिर सुनहरी लकीर पर,
चलें आहिस्ता-आहिस्ता,
जहाँ से चले थे हम,
वहीं फिर पहुँच जाएं।

सूरज भी तो पीले कपड़े,
पहन टहलने आता है,
उसके पीले कपड़े की चमक,
फैल जाती है दूर तलक।
चलो छोड़ दे सुनहरी लकीर को,
न जाने कितने लोग,
जाना चाहते होगें वहाँ।
छूना भी चाहते होंगे उसे,
जीवन में भी तो होता है,
एक अतंहीन क्षितिज,
जिसे हम स्वप्न में भी,
पार करना नहीं चाहते,
पर पार तो करना पड़ता है
जीवन तो जीना पड़ता है।

बालिका की जिम्मेदारी या मजबूरी

स्कूल जाना भी ज़रूरी,घर में रहना भी ज़रूरी।
मुश्किल है स्कूल में रहना, रोती होगी प्यारी बहना।
कैसे सीखूँ मैं सब सहना, और किसी से अब क्या कहना।
कैसे समझाऊँ अब सबको, क्या है मेरी मजबूरी।
स्कूल जाना भी ज़रूरी, घर में रहना भी ज़रूरी॥

कॉपी किताबों में अब तो, नहीं लग रहा तनिक भी मन।
चौंक जाती हूँ रह-रह कर, सुनती हूँ छोटी का रूदन।
घर जल्दी पहुँचना चाहती हूँ, पर बढ़ जाती है दूरी।
स्कूल जाना भी ज़रूरी, घर में रहना भी ज़रूरी॥

बच्ची तो मैं भी हूँ अभी, फिर ये एहसास कैसा है।
छोटी बहन के लिए दिल में, माँ सा उठता प्यार कैसा है।
बहन ही बन गई है अब तो, मेरी सबसे बड़ी कमजोरी।
स्कूल जाना भी ज़रूरी, घर में रहना भी ज़रूरी॥

सीख लिया मैंने अभी से, थपकी देकर उसे सुलाना।
लानी है आँखों में ममता, लोरी भी तो है उसे सुनाना।
वो जागती है उससे पहले, कुछ काम कर लूँ ज़रूरी।
स्कूल जाना भी ज़रूरी, घर में रहना भी ज़रूरी॥

पापा कहते हैं बुझे मन से, घर में विपत्ति आई है।
उसके चेहरे की चमक ऐसी, मैं चाँदनी कहूँ या नूरी।
स्कूल जाना भी ज़रूरी, घर में रहना भी ज़रूरी॥

गिटटू का पिल्ला

गिट्टू ले आया एक पिल्ला,
गोल-मटोल खूब झबरीला।
कूं-कूं करता फिरता है,
पर्दे की कोर मुंह में दबाकर,
गोल-गोल घूमता है।
बिस्किट, डबल रोटी के टुकड़े
दिया उसे जब खाने को,
रूठ गया किस बात पर जाने,
गिटटू चला मनाने को।
दौड़े वो तो आगे पीछे,
कभी भागे दायें-बायें,
कभी छिपे टेबल के नीचे,
कभी फिर पर्दे के पीछे,
चमकाए कंचे सी आँखें,
गोल-गोल काली आँखें,
खीच रही हैं अपनी ओर।
क्या है इसकी आँखों में,
खिंच रही हूँ इसकी ओर,
जानती हूँ, गली में घूमता था,
अच्छी बुरी चीजें सूंघता था,
रखना नहीं चाहती घर में,
पर क्यों हो रही हूँ कमजोर,
कोई तो रिश्ता है जरूर,
इसके और मेरे बीच में,
मेरा मन भटक रहा है,
इसकी आँखों के बीच में।
डरती हूँ,लोग क्या कहेंगे,
कुछ अच्छा कुछ बुरा कहेंगे।
पर गिट्टू को कोई फिक्र नहीं,
रखेगा इसे घर के अन्दर ही,
इतना प्यारा इतना सलोना,
एक खिलौना हमको मिला।
गिट्टू ले आया एक पिल्ला,
गोल-मटोल खूब झबरीला।

सहेली जिन्दगी

शोख़ जिन्दगी, मनचली जिन्दगी,
गम्भीर जिन्दगी, चंचल जिन्दगी।
सूखी जिन्दगी, सरस जिन्दगी,
चलती जिन्दगी, दौड़ती जिन्दगी।
कूदती जिन्दगी, उछलती जिन्दगी,
सरकती जिन्दगी, भागती जिन्दगी।
कभी बादलों सी उड़ती जिन्दगी,
कभी झरने सी झरती जिन्दगी।
न जाने कितने रंग, बदलती है जिन्दगी,
गाती है जिन्दगी, नाचती है जिन्दगी।
बात-बेबात रूठती है जिन्दगी,
बात-बेबात हँसती हैं जिन्दगी।
पर मैं रूठ जाऊँ अगर इससे,
झट मनाने बैठ जाती है जिन्दगी।
आज किस गली चली है जिन्दगी,
कल किस गली से गुजरेगी जिन्दगी।
जैसी भी है भली है, सहेली जिन्दगी,
अब कोई शिकायत करती न जिन्दगी।
तो चलुं मैं भी जरा हँस लूँ, मुस्करा लूँ,
गुनगुना लूँ, जैसे गुनगुनाती है जिन्दगी।

नन्ही तारा

नन्ही तारा

नन्ही तारा, सांस ले रही है,
उतर चुकी है धरती पर,
अभी अंधेरे घर में क़ैद है,
बाहर भी निकलना है,
खूब-खूब चमकना है,
सारी दुनिया देखनी है,
अपनी चमक परखनी है।

नादान तारा

पर तारा को पता नहीं है,
उसकी कोई ख़ता नहीं है,
तब भी रोना न हँसना है,
अपनी चमक समेट कर,
यहाँ से गमन करना है,
जहाँ से वह आई थी,
वह तारा है, सूरज नहीं।

बेबस तारा

शायद वापस आ जाए
फिर उसे कुछ महीनों तक
क़ैद में ही रहना होगा
दुनिया को देखने के लिए,
फिर संघर्ष करना होगा,
चमक सकेगी या नहीं,
ये संकट भी सहना होगा।

बेचारी तारा

उसे क्या मालूम अभी,
सूरज को चमक देने वाली,
अपना अस्तित्व बचाने को,
कितना संघर्ष करना है,
साथ न देगा कोई उसका,
निर्मम वन में जलना है,
जीने को मचलना है।

दृढ़ संकल्पित तारा

पर तारा अब चमकेगी,
सबका हृदय झिंझोड़ेगी,
अपना अस्तित्व बचाएगी,
एक दिन परिवर्तन लाएगी,
दृढ़ संकल्प किया है उसने,
अपनी चमक बिखेरेगी,
नन्ही तारा, प्यारी तारा।

ईश्वर कहां है

जहाँ अपना न कोई पराया हो, हर दिल में प्रेम समाया हो,
जहाँ कर जुड़ जाएं आदर से, श्रद्धा से शीश झुकाया हो,
तब समझना, ईश्वर क़रीब है।

पालने में लेटा शिशु जब, मंद-मंद मुस्काता जाए,
उसकी मधुर मुस्कान देख, मन तुम्हारा खोता जाए,
तब समझना, ईश्वर क़रीब है।

अपने साथ बुरा होने पर भी, नफरत के भाव हावी न हों,
तुम्हारी नजर में प्रेम हो सिर्फ, हिंसा की कोई चिंगारी न हो,
तब समझना, ईश्वर क़रीब है।

ईश्वर भी श्रम करता है, आराम नहीं वह करता है,
उद्यम करने को अगर, खुद को तत्पर पा जाओ,
तब समझना, ईश्वर क़रीब है।

मन विद्रोही हो जाए जब, किसी को दमित देखकर,
आंखों से मोती झरने लगें, किसी को कष्ट में देखकर,
तब समझना, ईश्वर क़रीब है।

दुनिया की भीड़ में कभी , उसकी आवाज भी दबती है,
कभी एकान्त में बैठने को, मन बहुत विवश हो जाए,
तब समझना, ईश्वर क़रीब है।

माँ तुम्हें आँचल में छुपा ले, माथे पर हाथ फेर जाए,
तुम्हारी नादानी पर मुस्काए, और तुम्हें फिर डाँट लगाए,
तब समझना, ईश्वर क़रीब है।

सरहद नाराज है

सरहद की हवा, सरहद की मिट्टी,
आज कुछ बदली-बदली सी है।
आंधी-तुफानों से भी ज्यादा,
सरहद में छिपी शक्ति है।
पर इसके माथे की रेखा,
कुछ खींची-खींची सी है।

सरहद की हवा, सरहद की मिट्टी,
आज कुछ बदली-बदली सी है ।।
किस बात की खीज है इसको,
किससे बहुत नाराज है ये ।
इसे बनाने वालों को भी,
आश्चर्य बहुत इस बात का है ।
कठोर हृदय सरहद की,
आँखें कुछ भीगी-भीगी सी है ।
सरहद की हवा,सरहद की मिट्टी,
आज कुछ बदली-बदली सी है ।।

नफरत है इसे उन लोगों से,
जिन्होंने इसे बनाया है।
फूलों की क्यारी बनने से पहले,
लाशों का मीनार बनाया है।
लाशों की बदबू से इसके,
चेहरे की रंगत, फीकी-फीकी सी है,
सरहद की हवा,सरहद की मिट्टी,
आज कुछ बदली-बदली सी है ।।

सरहद ने कभी ये सोचा न था,
कभी चैन से सो न सकेगी।
दिल दहलाने वाली आवाजों से,
कभी दूर वो हो न सकेगी।
रहना चाहती है अब राहत से,
पर थोड़ी मजबूरी सी है।
सरहद की हवा,सरहद की मिट्टी,
आज कुछ बदली-बदली सी है।।

सुन लो दुनिया के बाशिन्दों,
अब न बनाना कोई सरहद।
अगर बनाना पड़ जाए तो,
भुलना नहीं अपनी भी हद।
नसीहत ये विनती सी है,
सरहद की हवा,सरहद की मिट्टी,
आज कुछ बदली - बदली सी है।।

नालायक बेटा

एक परिवार ऐसा है,
जिसके पास न पैसा है,
घर में बहुत मायूसी है,
खर्च करने में कंजुसी है,
दुखी हर कलेजा है,
क्योंकि उसके घर में, एक नालायक बेटा है।

पहले नालायक न था,
पढ़ने में भी अव्वल था,
सबको उस पर गर्व था,
सबका एक ही संबल था,
पर वो ही बहुत अकेला है,
क्योंकि उनके घर में, एक नालायक बेटा है।

माता-पिता, भाई-बहन,
की आँखों में घृणा है,
नौकरी की तलाश में घूमते,
उसके माथे पे पसीना है,
उदास हो घर लौटा है,
क्योंकि उनके घर में, एक नालायक बेटा है।

सब्र का बांध टूट रहा है,
मन में आक्रोश फूट रहा है,
उसका सुख, चैन लुट रहा है,
किताबें ही दुनिया थीं उसकी,
उन्होंने ही सुख समेटा है,
क्योंकि उनके घर में, एक नालायक बेटा है।

हरे नोटों के वृक्ष तले,
परिवार को सुलाना है,
खोया सम्मान पाना है,
आँखों का पानी उसने,
वापस लिया समेटा है,
क्योंकि उनके घर में, एक नालायक बेटा है।

बेच दिया ईमान उसने,
सत्य को खूब खरोंचा है,
भ्रष्टाचार के गंदे जल से,
अपना मन खूब सींचा है,
अब खुश हर कलेजा है,
क्योंकि उनके घर में, अब एक लायक बेटा है।

पगली

वो अब भी दिल में रहती है,
दुनिया जिसे पगली कहती है।
धूल धुसरित फुटपाथ पर,
उसने भी दुनिया बनाई है।
उसकी छोटी सी दुनिया,
उसके सपनों की परछाई है।
उस अजीब दुनिया में,
खाली बोतलें, टूटी चप्पलें,
दो चार बोरियाँ हैं।
एक कम्बल, कुछ चिथड़े,
दो मैली साड़ियाँ हैं।
ईट के टुकड़ों से बना,
एक बेढंगा चुल्हा है।
कभी-कभी भगोने में,
चाय भी उबालती है।
वो अब भी दिल में रहती है,
दुनिया जिसे पगली कहती है॥
कुछ रिश्ते तो याद हैं उसे,
कुछ को भूल गई है।
किसी एहसास पर रोती है,
किसी पे खूब हँसती है।
पति का साथ छूटा होगा,
उसका शायद वर्षों से।
पर बेटों के खिले चेहरे,
वो अब भी याद करती है।
आने-जाने वालों को,
हसरत से ताका करती है।
छोड़ गए थे जिस गाड़ी से,
उसे पहचान कर वो,
अब भी पीछा करती है।
वो अब भी दिल में रहती है,
दुनिया उसे पगली कहती है॥
उलझे गंदे बालों पर,
फिराई है टूटी कंघी।
शायद उसके रहने को,
मिल गई है दूसरी गली।
समेट लिया है उसने,
बोतलें, डिब्बे, बोरियाँ।
खत्म हो गई है अब,
वो छोटी सी दुनियां।
मैं क्यों परेशान हूँ,
क्यों इतना बेचैन हूँ।
वो भी नारी, मैं भी नारी,
क्या यही बात खलती है।
वो अब भी दिल में रहती है,
दुनिया जिसे पगली कहती है॥

जीना चाहता है मन

कभी झरने सा पत्थर पे, गिरता रहता था मन,
आज झरने सा झर-झर, झरता रहता है मन।

कभी पाताल की गहराई, नापता रहता था मन,
आज आकाश की उंचाई, देख हुलसता है मन।

कभी आँखों को सपनों से, बचाता रहता था मन,
आज आँखों में सपने, सजाता रहता है मन।

कभी हारने पर कोने में, छुप कर रो लेता था मन,
आज जी भर ख़ुशी मनाता रहता है मन।

कभी डर का पुतला, बन जाता था मन,
आज साहस प्रतीक, बन गया है मेरा मन।

कभी सबसे हर रिश्ते, तोड़ना चाहता था मन,
आज रिश्तों में प्रेम की, खुशबू भरता है मन।

कभी कष्टों से टकराकर, घायल हुआ था मन,
अकेला पड़ा कभी कहीं, कराह रहा था मन।

जीवन जीने से पहले, मरना चाहता था मन,
आज खुद को फिर से, सम्भाल चुका है मन।

अब सब भूलकर, जीना चाहता है मन,
अब सब भूलकर, जीना चाहता है मन।

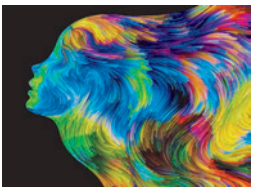

विषधर

फन फैलाए खड़ा है विषधर,
आँखों में लिए मृत्यु तुल्य कहर।
किसने मेरा विष चुराया,
किसी ने कैसे न शोर मचाया।
शयन करता रहा मैं वृक्ष पर,
बूढ़े बरगद ने भी साथ दिया,

कि न कैसे कोई हलचल।
घोर आश्चर्य वृत में घिरा हूँ,
विषाभाव से दुःख नीर में तिरा हूँ।
विखराया किसने, गाँव, नगर,
मेरा विष, आँगन और घर।
अरे ! ये क्या मेरा विष बिन्दू,

मानस पुत्रों ने ग्रहण कर लिया।
छोडेंगे न कभी विष बिन्दू ,
अब तो जैसे ये प्रण कर लिये।
स्वार्थ, घृणा, हिंसा, क्रोध,
न जाने कैसे-कैसे नाम दे दिये।
विष ताप से जलते भी हैं,
पर दूर होना गवारा नहीं।
इनका अधिकार अधिक है,
जैसे विष हमारा नहीं।
चलूँ मैं वापस चिन्ता छोड़कर,
उसी बूढ़े बरगद पर।
अफसोस तो इसी बात का है,
कहलाऊँगा मैं विषधर।
मानव मेरा विष पीकर भी,
कहलाएगें निस्पृह नर।

ऐसी है माँ की लीला

एक रात देवी माँ ने, असंख्य रूप था धरा,
फिर असंख्य हाथों में असंख्य दीप रखा।
चली ज्योति पुंज बनकर, भक्त के घर,
रख दिया असंख्य दीप,उसके चौखट पर।
भक्त चकराया, सूर्य धरती पर कैसे आया ?
ये कैसी लीला देवी माँ ने रचाया।
सुख का उजाला, सम्पदा का उजाला,
दीपों के उजाले ने, चमत्कार कर दिखाया।
खुशियों का उजाला, ख्याति का उजाला,
भक्त ने उजाले में, अपने आपको भुलाया।
भक्त ने उजाले में, दुनिया को सब कुछ भुलाया,
पर अपने हृदय से, माँ को निकाल न पाया।
फिर ये कैसी पिपासा, ये अधीरता कैसी,
कही चैन न पाए, ये व्याकुलता कैसी ?
आँखें बन्द कर उसने हृदय में झाँका,
माता की छवि मन्द-मन्द मुस्काई।
उसके मन में किरण सी लहराई,
अब सारी बातें उसकी समझ में आई।
तब से ही वो आँखें बन्द किए बैठा है,
कोई उसे पागल, कोई दीवाना कह बैठा है।
उसने अपने आपको सबसे दूर समेटा है।
भाव विभोर होकर उनके चरणो में लेटा है,
अब तो वो सिर्फ अपनी माँ का बेटा है।

माँ तुम सपनो में आया करो

माँ तुम सपनों में आया करो, ममतामयी छवि दिखलाया करो।
मैं बन जाऊँ अबोध शिशु, मुझे आँचल में छिपाया करो।
सोया रहूँ जब सुखद नींद में, तुम मीठी लोरी सुनाया करो।
माँ तुम सपनों में आया करो, ममतामयी छवि दिखलाया करो।

मैं किलकारी भरूँ, हँसता रहूँ, तुम मुझे देख मुस्कराया करो।
उंगली तुम्हारी पकड़ कर चलूँ, तुम मुझको गले लगाया करो।
माँ तुम सपनों में आया करो, ममतामयी छवि दिखलाया करो।

मैं माँ कह कर पुकारा करूँ, तुम दौड़ी चली आया करो।
चलूँ कभी मैं तेज धूप में, शीतल छाँव बन जाया करो।
माँ तुम सपनों में आया करो, ममतामयी छवि दिखलाया करो।

नटखट, नादान, बड़ा चंचल, पर हूँ तेरा प्यारा बालक।
डाँट लगाओ गलतियों पर, माथे पर हाथ फिराया करो।
माँ तुम सपनों में आया करो, ममतामयी छवि दिखलाया करो।

अगस्त के पुष्प

जगत जननी, देवी भवानी, कैसे कहूँ तूने दर्शन नहीं दिया।
मेरी ही आँखें बन्द थीं, मैंने तुम्हें पहचाना नहीं।

कभी माँ, कभी बहन, कभी बेटी का रूप धरा तुमने,
दया, ममता, करूण स्नेह, का अमृत मुझपर बरसाया।
पर मैंने तुम्हें पहचाना नहीं॥

जीवन दिया, सूरज बन कर, जल बूँदें बनकर तृप्त किया,
शीतल चाँदनी बनकर छाई, इन्द्रधनुषी रंग दिखलाया।
पर मैंने तुम्हें पहचाना नहीं॥

पक्षियों के कलरव से, भौंरों के गुंजन से,
तरंगवती के तरंगों से, झर-झर झरते निर्झर से,
तुने संगीत सुनाया तो था।
पर मैंने तुम्हें पहचाना नहीं॥

जब भी संकटों से घिर गई, तब-तब तुम्हें महसूस किया,
श्वेत, लाल अगस्त के पुष्प, तुने मुझपर बरसाया तो था।
पर मैंने तुम्हें पहचाना नहीं॥

जगत जननी, देवी भवानी, कैसे कहूँ तूने दर्शन नहीं दिया।
मेरी ही आँखें बन्द थीं, मैंने तुम्हें पहचाना नहीं।

कितने सेतिका

हर स्त्री अपने जीवन में, सेतिका सृजन करती है।
स्वयं सीता, पति राम, लव-कुश पुत्र रचती है।
असीम चाह चन्दन का, राधिका, ब्रजनन्दन का,
हर क्षण मनन करती है।
हर स्त्री अपने जीवन में, सेतिका सृजन करती है॥

कर्तव्य और मर्यादा के, सुमधुर समन्वय का।
संस्कार, संस्कृति के पल्लवन, पुष्पन का
जतन से जतन करती है।
हर स्त्री अपने जीवन में, सेतिका सृजन करती है॥

दया, ममता, करूणा के, मोती चुन-चुन कर,
उर सीपी मे भरती है,
अनुराग-वल्लरा का नित्य ही सिंचन करती है।
हर स्त्री अपने जीवन में, सेतिका सृजन करती है॥

दुर्गा, काली, कल्याणी, अनेक नाम, अनेक रूप,
का वरण करती है।
ऐसी ही सारी सृष्टि का, शीत-ग्रीष्म -वृष्टि का,
पोषण, रक्षण करती है।
हर स्त्री अपने जीवन में, सेतिका सृजन करती है॥

घुंघरूवाली पालकी

घुंघरू वाली पालकी से आते-आते,
कहाँ लगा दी तुमने देर अम्बे माँ, मन्दिर आते-आते ।।

पट खुल गया था, मंदिर का, पर उषा, जरा अलसाई सी थी,
सबसे पहले जो यहाँ पहुँचा था, वो तो पवन पुरवाई ही थी,
वो भी चुप हो गई अब तो, तेरी खबर लाते-लाते ।
कहाँ लगा दी तुमने देर अम्बे माँ, मन्दिर आते-आते ।।

सुबह, सवेरे तेरे द्वार पर, एक कन्या भी आई थी,
बड़ी आस से उसने तुझको, कितनी आवाज लगाई थी,
रख गई पूजा की थाल, अखियाँ बरसाते-बरसाते ।
कहाँ लगा दी तुमने देर अम्बे माँ, मन्दिर आते-आते ।।

मेरे नैनों में सुख-दुख की, छाया तो पहले से थी,
पर अब तेरे दर्शन की,उत्कंठा भी है इनमें,
पर होंठ कुछ रूठ रहे हैं, तेरी वन्दना करते-करते ।
कहाँ लगा दी तुमने देर अम्बे माँ, मन्दिर आते-आते ।।

रावण जलाना, छवि न लाना

प्रत्येक वर्ष की भांति, इस वर्ष भी रावण जलेगा।
रावण जलेगा या पुतला, कहाँ जलेगा, कैसे जलेगा,
यहं प्रश्न महत्वहीन है, पर प्रश्न बड़ा विचित्र है।

हर वर्ष तो जला, पर मरा क्यों नहीं,
क्यों सिर, गर्व से उठाए, तन कर खड़ा हो गया।
जलेगा वों फिर से, पर मरेगा नहीं क्योंकि, उत्सव नहीं मनेगा।

रावण -दहन का उत्सव, अधर्म पर विजय का उत्सव,
रावण-दहन पश्चात,लोग घर लौट जाते हैं,
पर उसकी छवि शायद, मन में छुपा कर लाते हैं।

तभी तो उसके जैसे, हर वर्ष दिख जाते हैं।
अबकी रावण जलाना, उसकी छवि घर न लाना।
उसके अवगुण न आजमाना,
राम को याद करना, राम के गुण अपनाना।

आखरी सलाम बाकी है

इस शहर की एक गली,
आज तक है अजनबी।
उस गली का एक घर,
घूरता है मुझे आज तक,
उस घर में रहते लोग,
भी हैं बहुत अजनबी।
नजरें अंजान, बातें अनसुनी,
हंसी भी रहस्यमयी,
मगरूर बहुत वो गली।
उस गली से मेरा कोई रिश्ता नहीं,
अपना कोई दिखता नहीं,
हवा ने भी सुनायी नहीं,
वहाँ की कोई दास्तां।
रहते हैं सब वहाँ शराफत से।
या कुछ अदावत से।
उस गली के उस घर में,
अभी जाना बाकी है।
वहाँ रखा है मेरा कुछ,
सामान किफायत से,
वो सामान लाना बाकी है।
सामान रखने वाले से,
पहचान अभी बाकी है।
अलविदा कहने से पहले,
आख़िरी सलाम अभी बाकी है।

सोचो जरा

मानव से तो ईश्वर का मन, अब तक शायद उबा नही है।
तभी तो उसे गढ़ने का, सांचा उसने तोड़ा नही है।

गोरे हों या काले दोनों, ईश्वर को बहुत पसन्द हैं।
अब तक उसने दूसरा रंग, किसी के लिए चुना नही है।

धरती वासियों का मन ही, उसका प्रिय ठिकाना है।
अन्य ग्रहों पर जीवन चिन्ह, अब तक उसने छोड़ा नही है।

काया सृजित कर जीने को, भोजन पहले दे देता है।
अभी भी किसी माँ का आँचल, दूध से सूना नहीं है।

उस परम पिता के हृदय में, एक अबोध शिशु पलता है।
हमें बनाया है उसने, हमसे ही कौतुक करता है।

किस जाति, किस धर्म का है, ये राज छुपाकर रखता है।
बड़ों के सिर पर हाथ रखे, छोटों को पलकों पर रखता है।

नादान मानव मन फिर भी, उसे खोजता फिरता है।
वो तो मन की गलियों में, हर क्षण विचरण करता है।

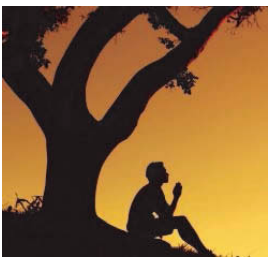

निर्मोही परिन्दा

अपना घर, आँखों के सामने,
गिर जाए तो, कैसा लगता है।
हमने देखा है वो भयानक मंजर,
जिन्दा हैं अब तक और खुश भी।
छत गिरी, फिर दीवारें गिरीं,
ईंटें भी चारों ओर बिखर गयीं।
कुछ टुकड़े हम पर भी गिरे,
कुछ चीजे जमीं मे दफन हुयीं ।
कुछ सही सलामत हासिल भी हुयीं,
कुछ रिश्ते-नाते भी थे घर में,
कुछ यादें और वादे संजोए गये थे।
टूटा पिंजरा कोने मे दबा था,
शायद परिंदा पहले उड़ गया था।
पुरानी घड़ी अब भी बज रही थी,
न जाने कैसे वो बच गई थी।
कुछ बचा, कुछ खत्म हो गया था,
जो बच गया अब तक डस रहा था।
पुरानी घड़ी उठानी नही है,
टूटे सामान सजाने नही हैं,
घर तो घर है बन ही जाएगा,
पर अब कोई निर्मोही परिंदा,
वापस न घर में कभी आएगा।

हे अश्वारोही, जरा रूक जाना

हे अश्वारोही, जरा रूक जाना,
थोड़ी देर ठहर विश्राम कर लेना।
घने वृक्ष की शीतल छाया में,
श्रम-शिथिल अश्व, खड़ा कर के,
घट-जल से प्यास बुझा लेना।
पर न देखना मेरा मुखचन्द्र,
नेत्र झुकाकर, जल पी लेना।

कितनी दूर से आये हो तुम,
कितनी दूर अभी और है जाना,
न ठहरना यहाँ अधिक देर,
तुमको अपनी मातृभूमि पर,
स्वतंत्रता की ज्योत जलाना।
भुजाएं तुम्हारी फड़क रही हैं,
देश रक्षा हेतु तड़प रही हैं।
कण्ठ में घुली वीर-रस रागिनी,
लपक उठी चपल भुजंगिनी,
माथे पर चन्दन तिलक लगाना,
आँखों में उग्र लालिमा जगाना।

देश शत्रु दमन के लिए,
वीर भाव हृदय मे भर लेना।
कर लेना विजय हेतु वंदना,
लक्ष्य सदैव आगे रखना।
हे अश्वारोही, जरा रूक जाना,
थोड़ी देर ठहर, विश्राम कर लेना।

एक रोटी

न खोता कोई बचपन, न जवानी बजबजाती,
एक रोटी जो जीने के लिए, ख़ुशी से मिल जाती।
न मुड़ते नादान पांव, गहरे अंधेरे की ओर,
चूड़ियों की जगह हाथों में, बन्दुकें न आती।
चन्द किताबें हाथों में, हमारे मिल जाती,
अच्छा-बुरा सोचने की कला हमें भी आ जाती।
न खोता कोई बचपन, न जवानी बजबजाती,
एक रोटी जो जीने के लिए, ख़ुशी से मिल जाती।।

भूख और गरीबी ने, दौड़ा-दौड़ा कर मारा,
जुल्म के कोड़ों से पीठ न छिल जाती।
जगा रहता परिवार, सचेत रहते रिश्ते,
तो हमारे इज्जत की बलि न चढ़ जाती।
न खोता कोई बचपन, न जवानी बजबजाती,
एक रोटी जो जीने के लिए, ख़ुशी से मिल जाती।।

जंगल, गुफा, कन्दराओं में छिप-छिप कर,
यूँ ही सबसे डर-डर, दिन रात न बिताते।
क्या है जिन्दगी, पहले ही समझ जाते,
तो हमें ऐसे भयानक ख्वाब न दिखाती।
न खोता कोई बचपन न जवानी बजबजाती,
एक रोटी जो जीने के लिए, ख़ुशी से मिल जाती।।

शीतल नीम की छाया में

कड़वे-कड़वे नीम की, हरी-भरी शाखें,
मौन लेटे छत पर, फैला देती हैं पाँखें,
हरे-हरे पत्ते, पसर जाते लहरा के,
कभी पीले-पीले पत्ते झिलमिलाते,
हरे-हरे पत्ते कड़वे, कटे किनारे,
कड़वे-कड़वे नीम के कड़वे बहुत किनारे।
कभी-कभी छत भी बहुत तप जाती,
शाम तक सफेद सितारों से फूल की,
ओढ़नी ओढ़कर बहुत खुश हो जाती।
हरा-हरा टोप पहने नीम खड़ा है,
धूप लग रही है, थोड़ा मचल रहा है।
तो फिर तपती छत पे, क्यों उतर रहा है ?
हवा भी इसकी गंध फैला रही है।
क्या है इसके कड़वे रसगंध में,
मन खो रहा है, अपूर्व आनन्द में।
जैसे पीपल पर लटके मधूकोष में,
भर गया हो मीठा-मीठा शहद,
जैसा कंटीली झाड़ियों के बीच में,
खिल गया हो, गुलाबी गुलाब दल।
कड़वे नीम की शीतल छाया में
मिल गया है मुझे, प्रेम का सागर।

सुन मयूरा

उड़-उड़ के मयूरा चले जाना जरा,
अम्बे माँ की अटरिया बैठ जाना जरा।
करेंगी स्नान जब नील-सरोवर में,
कमल बनकर तू खिल जाना जरा,
अम्बे माँ की अटरिया बैठ जाना जरा ।।

केश सवारेंगी जब कनक कंघी से,
चुन-चुन मोती सजाना जरा,
अम्बे माँ की अटरिया बैठ जाना जरा।
झिलमिल सितारों की ओढनी जब ओढ़ें,
उन्हें, काजल की डिबिया थमाना जरा,
अम्बे माँ की अटरिया बैठ जाना जरा ।।

रून-झुन, रून-झून पायल जो बाजे,
एक घुंघरू धीरे से उठाना जरा,
अम्बे माँ की अटारिया बैठ जाना जरा ।।

सोती रहेंगी माँ भरी दुपहरिया,
अपने पंखों से कर देना छाया जरा,
अम्बे माँ की अटरिया बैठ जाना जरा ।।

जब भी माता का मन न लगे,
घूम-घूम नृत्य दिखाना जरा,
उड़-उड़ के मयूरा चले जाना जरा,
अम्बे माँ की अटरिया बैठ जाना जरा ।।

एक बावरी क्या करे

एक बावरी क्या करे,
वो मंदिर-मंदिर घूमे।
द्वार-द्वार माथा टेके
चौखट-चौखट चूमे।

दुनिया उसको समझ न पाती,
गाँव-गली उसको न सुहाती।
वो तो मंदिर के द्वार पर,
बैठ हंसे, कभी रूठे।
एक बावरी क्या करे
वो मंदिर-मंदिर घूमे।

तीन दिनों का लगन नहीं,
लगन लगी है बरसों से।
ऐसी लगन लगी माता से,
सब रिश्ते-नाते छूटे।
एक बावरी क्या करे,
वो मंदिर-मंदिर घूमे।

एक पत्थर कहीं से लाकर,
लाल चुनरी उस पर ओढ़ाई।
उसे ही माता कहती है,
जैसे वह सच्ची, सब झूठे।
एक बावरी क्या करे,
वो मंदिर-मंदिर घूमे।

मुझे याद है जब तू आई थी

मुझे याद है जब तू आई थी, वो तू थी, नहीं तेरी परछाई थी।
तेरे कंगना उस दिन खनके थे, पायल भी तो छन-छनके थे।
चुनरी भी तूने लहराई थी,
मुझे याद है जब तू आई थी, वो तू थी, नहीं तेरी परछाई थी।

गले मे गुणहल की माला थी, तू एक सुन्दरतम बाला थी।
तेरी बिन्दिया जो चमकी थी, देख दामिनी भी शरमायी थी।
मुझे याद है जब तू आई थी, वो तू थी, नहीं तेरी परछाई थी।

मन मेरा, कुछ उदास था, तू पवन वेग से आई थी।
कोमल कर, करूणा भीगे, मेरे माथे पर फिराई थी।
मुझे याद है जब तू आई थी, वो तू थी, नहीं तेरी परछाई थी।

गहरी अंधेरी रात में जब, मैंने ठोकर खायी थी,
मुझे सम्भालने को तुने, बाहें अपनी फैलाई थी।
मुझे याद है जब तू आई थी, वो तू थी, नहीं तेरी परछाई थी।

खारे पानी का पत्थर

एक पत्थर, पानी के अन्दर,
एक पत्थर, पानी के बाहर,
पानी मे हँसता है पत्थर,
पानी मे गाता है पत्थर,
पानी के अन्दर बिताता,
अपना प्यारा, न्यारा जीवन।
एक बात समझ न पाई,
दिल क्यों कहलाता है पत्थर,
क्या दिल आकार बदलता है?
पर पत्थर तो जैसा चाहे,
आकार बदल लेता है झट।
पानी में रहता है पत्थर,
फिर भी प्यासा रह जाता है।
पीने नहीं देता समुन्दर,
अपना खारा-खारा जल।
क्यों नहीं निकलता पत्थर,
खारे-खारे जल से बाहर।
किस मोह में पड़ा है ये,
कैसा लालच इसके अन्दर।
अब बाहर निकल जा पत्थर,
अनुभव कर हवा की छुअन,
मिट्टी की गंध, सूरज की तपन।
फिर भी न लगे तेरा मन,
तो चले जाना वापस वहीं,
जहाँ मिले तुझे खारा जल।
कर लेना दोस्ती समुन्दर से,
कर देना उसके अधीन मन।

ईमानदारी कीमत चाहती है

यकीन हो या न हो, पर ये सौ फीसदी सच है,
ईमानदारी कभी कभी, अपनी कीमत चाहती है।

परिश्रम का साथ उसे, भाता तो बहुत है,
पर साथ ही धैर्य की, मोहलत चाहती है।
इसे रहने के लिए, सुरक्षित जगह चाहिए।
पांव पसारे सो सके, इतनी फुरसत चाहती है।

दिखती कैसी है पता नहीं, शायद सुन्दर ही है,
रहने को महल दिल का, शानों-शौकत चाहती है।
लहू ज़िगर का पीकर, तंदरुस्त रहती है,
बेइमानी से रार की, एक ही आदत पालती है।

रखना है इसे पास तो, कीमत चुकाना सीखो।
पाकर जहाँ की दौलत, पल में गँवाना सीखो,
ये संघर्ष के पत्थर का, कठोर बिछावन चाहती है।
यकीन हो या न हो, पर सौ फीसदी सच है,
ईमानदारी कभी कभी, अपनी कीमत चाहती है।

ये कैसा सीखना

हमने अपने जीवन में, सीखा भी तो क्या सीखा,
हाथ जोड़ते-जोड़ते, दिलों को तोड़ना सीखा।
नहरें, ताल-तलैया बनाई, करूणा जल सुखाना सीखा,
हमने अपने जीवन में, सीखा भी तो क्या सीखा ॥

तन अपना ढ़कते रहे, पराया जख्म उधेड़ना सीखा,
उंगली पकड़ कर चले थे, उंगली उठाना भी सीखा।
हमने अपने जीवन में, सीखा भी तो क्या सीखा ॥

दामन पसार कर बैठ गए, दान का चादर बटोर लिया,
मीठी बातें करते-करते, मन में कड़वाहट घोल लिया।
हमने अपने जीवन में, सीखा भी तो क्या सीखा ॥

खुद कहकहे लगाते रहे, औरों की हँसी छिनना सीखा,
रोते हुए इन्सानों की, छवि पर रीझना सीखा।
हमने अपने जीवन में, सीखा भी तो क्या सीखा ॥

सोते रहे सारी उम्र यूँ ही, औरों के सपने, बिखेरना सीखा,
बैठ बिताया दिन अपना, राह औरों की रोकना सीखा।
हमने अपने जीवन में, सीखा भी तो क्या सीखा ॥

भाई या शत्रु

जब मुझे रावण ने मारा, रावण तो दुनिया कहती है,
भरे दरबार में, अपनी सरकार में, मुझे मेरे भईया ने मारा।
ऐसी लात जमायी पीठ पर, मुकुट गिरा और झन-झनाया,
अब यहाँ रहना नही गवारा, मुझे मेरे भईया ने मारा ।।

क्या सचमुच नाराज थे वे, या उनको भी राम प्यारे थे,
मुझे राम के पास भेजने को,उन्होने सारा जुगत लगाया,
मुझे भरे दरबार में लताड़ा, मुझे मेरे भईया ने मारा ।।

मेरे आँगन में तुलसी वृन्द, और द्वार पर राम लिखा था,
क्या भईया को बचपन से, वो एक बार न दिखा था,
तब उन्होने मुझे क्यों न मारा, मुझे मेरे भईया ने मारा ।।

चलूँ मैं अब सब छोड़कर, अपनों से नाता तोड़कर,
ये दुत्कार और प्रताड़ना, अब नहीं मुझे और सहना,
छिन गया मुझसे मेरा सहारा, मुझे मेरे भईया ने मारा ।।

राम-राम मैं जपा करूँगा, उनकी शरण में पड़ा रहूँगा,
मिल जाए भइया को सदबुद्धि, यही विनती मैं किया करूँगा,
राम ही हैं अब मेरा सहारा, मुझे मेरे भईया ने मारा ।।

ये कैसा जहाँ

ले आए मुझे तुम यहाँ, जहाँ कोई आता जाता नहीं।
वीरान पहाड़ियों पर, कूके न कोई कोयल,
किसी के यहाँ न पद चिन्ह, होती न कोई हलचल,
उजाले को यहाँ रहना, न जाने क्यों सुहाता नहीं।
ले आए मुझे तुम यहाँ, जहाँ कोई आता-जाता नहीं।

घने जंगलों के बीच, ये खण्डहर कैसा,
कभी तो होगा राजमहल, पर अब अवशेष जैसा,
मुझे इससे परिचित, कोई क्यों कराता नहीं।
ले आए मुझे तुम यहाँ, जहाँ कोई आता-जाता नहीं।

अधूरा अतीत, अधूरी कहानी, एक था राजा, एक रानी,
सेना-सैनिक, घोड़े-हाथी, सबका होगा अस्तित्व यहाँ,
इतिहास में खो गये कहाँ, अब इनका पता नहीं,
ले आए मुझे तुम यहाँ, जहाँ कोई आता-जाता नहीं।

रखती जा गृहलक्ष्मी

रखती जा गृहलक्ष्मी, दीये, द्वार पर रखती जा ।।
एक दीया देवालय में,
एक दीया चौराहे पर,
एक दीया गंगा तट पर,
एक दीया किसी गरीब के,
घर में भी तू रखती जा ।
रखती जा गृहलक्ष्मी, दीये, द्वार पर रखती जा ।।

वंदन वारों से द्वार सजा,
रंगोली से आँगन सजा,
फूलो की लड़ियाँ सजा,
आने वाली हैं लक्ष्मी माँ,
राह भी निरखती जा ।
रखती जा गृहलक्ष्मी, दीये, द्वार पर रखती जा ।।

पूजा की थाल सजा,
अगर, अक्षत, कर्पूर सजा,
लक्ष्मी माँ के आगमन पर,
अपना सुन्दर मन भावन,
छोटा सा संसार सजा ।
रखती जा गृह लक्ष्मी, दीये, द्वार पर रखती जा ।।

चाँद और रात

काली रात, उजले चाँद से,
ज्यादा ही शरमा रही है।
झाड़ी-झुरमुटों के बीच,
खुद को छुपा रही है।
चाँद भी लापरवाह है,
खोजता है न रात को।
बस चमकता जा रहा है,
उसे क्या खबर कि,
काली अंधेरी रात बस,
उसे ही देखती रहती है।
चाँद चमकते तारों संग,
मगन होता रहता है।
पर उसकी मधुर चाँदनी,
रात से जा मिलती है।
रात खुद मिटकर भी,
चाँदनी को जिन्दा रखती है।

शायद वो आती होगी

शायद वो आती होगी, गागर, जल की छलकाते हुए।

कुसुमकली सी चटकी होगी, चन्द्रकिरण सी छिटकी होगी।
कुछ इठलाते, कुछ शरमाते, धानी सी गंध बिखराते हुए,
शायद वो आती होगी, गागर, जल की छलकाते हुए।

बाबा की दुलारी, अम्मा की लाडली, बन के चिरइया, चहकी होगी।
गोद में लिए, चंचल गिलहरी, श्यामा गौ को सहलाते हुए।
शायद वो आती होगी, गागर, जल की छलकाते हुए।

कुछ पनघट पर अठखेली, कुछ सखियों संग आँख मिचौली।
हिरणी सी कुलांचे भरती, झांझरिया झनकाते हुए।
शायद वो आती होगी, गागर, जल की छलकाते हुए।

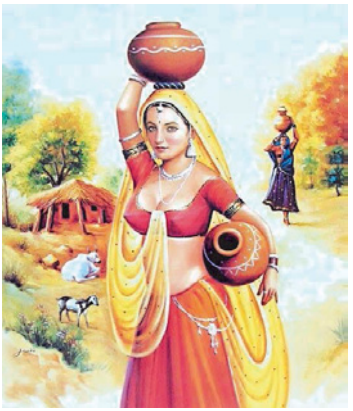

इतनी विनती है तुमसे

हे लक्ष्मी माँ, तुम हम पर,
करूणा अमृत, बरसाओ।
अंधेरा मिटाओं, गरीबों को,
अन्न-धन से परिपूर्ण बनाओ।
तुम्हारा कोई भी बालक,
भूखे पेट न सोने पाए।
तन ढ़का रहे वस्त्र से,
उर मे अंधियारा न छाए।
ऐसा जतन तुम कर जाओ।
हे लक्ष्मी माँ तुम हम पर,
करूण अमृत बरसाओ।
सादगी, सदभावना का,
मानवता की सेवा का,
दीप जलाना हमें सीखा दो।
हर घर में तुम वास करो,
हमे छोड़कर न जाओ।
हे लक्ष्मी माँ तुम हम पर,
करूणा अमृत बरसाओ।

अनोखा बाजार

इस जहाँ के बाजार में,
हर सामान अब भी मिलता है।
बोलो तो क्या-क्या खरीदोगे,
यहाँ हर सामान, सस्ता बिकता है।

सस्ती है भीड़, तन्हाइयाँ भी सस्ती,
आँसू भी हैं सस्ते, रूसवाईयाँ भी सस्ती ,
बहुत सस्ते में संजोया हुआ,
अरमान अब भी बिकता है।
बोला तो क्या खरीदोगे,
यहाँ हर सामान, सस्ता बिकता है।

दोस्ती भी सस्ती है, दिल्लगी भी,
हँसी भी सस्ती है, हर ख़ुशी भी,
पर सबसे सस्ते में यहाँ,
ईमान अब भी बिकता है।
बोलो तो क्या-क्या खरीदोगे,
यहाँ हर सामान, सस्ता बिकता है।

धोखे, फरेब की बीन बजा कर,
इंसान, इंसानों को नचाता है।
उम्मीदों के पंछी बेचता,
चिड़िमार अब भी दिखता है।
बोलो तो क्या-क्या खरीदोगे,
यहाँ हर सामान, सस्ता बिकता है।

बिकते है कुछ लोग भी,
चंद सिक्कों की खातिर,
और मजबूर माँ की भूख का,
इम्तिहान अब भी बिकता है।
बोलो तो क्या-क्या खरीदोगे,
यहाँ हर सामान, सस्ता बिकता है।

सच्चाई भी बिकती है,
इस बाजार के कोने में,
खरीदने वाला बड़ा शरीफ,
कदरदान अब भी दिखता है।
बोलो तो क्या-क्या खरीदोगे,
यहाँ हर सामान, सस्ता बिकता है।

तेरे इस जहाँ से

तेरे इस जहाँ से, दिल कब का भर गया,
तुझे ही पास बुलाने की, फुरसत नही मिली।
धुली-धुली सी हैं निगाहें, शिकवा बहा दिया,
नींद को करीब आने की, इजाजत नहीं मिली।
छुपा बैठा है तू , घनेरे बादलों के बीच,
हम जैसे जीने की, तुझे तबियत नहीं मिली।
कुदरत तो बनाया, इन्सान क्यों बनाया,
तुझे तो तोहफे में, रोने की आदत नहीं मिली।
उतर जाए जमीं पर, मेरी फरियाद सुने,
मेरी सदाओं को, इतनी ताकत नही मिली।
बदल दे तू पल में तस्वीर ए तकदीर,
क्या तुझे इतनी भी, हिम्मत नहीं मिली।
बहुत दिन हुए, तेरी आहट सुने हुए,
खुशबू ए इनायत की, खबर नहीं मिली।
कुचल दूँ बेरहमी से, अरमान ए दिल को,
तुझसे मुझे ऐसी, फितरत नही मिली।
जीना चाहता हूँ मैं भी, पाक ओ साफ जिन्दगी,
बदकिस्मती से इतनी, शराफत नहीं मिली।
तेरे इस जहाँ से, दिल कब का भर गया,
तुझे ही पास बुलाने की, फुरसत नही मिली।

ठंड डराती है

धुंधली-धुंधली सी ठंड,
चुपके-चुपके आ जाती है।
उँचे पर्वतों से उतर कर,
सफेद लिबास पहने देख,
रात भी डर जाती है।
और रोने लगती है,
आँसू जम जाते हैं।
हरी-हरी दुबों पर।
ठंड घुमती रहती है,
सुनी सपाट राहों पर।
पेड़ों पर भी झूलती है,
खिड़की गर खुली रहे।
तो ठंड झाँकती है,
तेज-तेज साँसें लेकर,
अपनी मौजुदगी का,
एहसास कराती है।
बिल्ली के जैसे दबे पांव,
घर में घुस जाती है।
बर्फ से धुले हाथ,
फिराने लगती है,
सबके चेहरों पर,
पर धूप से डरती है।
डर कर छुप जाती है,
शायद पर्वतों पर।
कुएं, ताल-तलैयों में,
ठिकाना ढूंढती है।
दिन बड़ा होते ही,
ठंड डराना छोड़ती है।
अब बन जाती है,
प्यारी-प्यारी सुहानी ठंड।

महंगाई की कीलें

कुछ ऐसी फँसी है जेब में, महंगाई की कीलें।
अनगिनत छेद कर चुकीं, फिर भी न निकली कीलें।

कुछ भी रखूँ जेब में, बस गिर ही जाती है,
माह गुजरते-गुजरते, सिक्कों की खनक आती है,
कैसे निकालूँ इन कीलों को, मुझे समझ न आती है,
एक को जैसे-तैसे निकालूँ, दूसरी फँस जाती है,
मेरी जर्जर जेब में, ये महंगाई की कीलें।
अनगिनत छेद कर चुकीं, फिर भी न निकली कीलें।

मेरी जैसी जेब वाले, लोग बहुत मेरे देश में,
नोंच कर फेंकना चाहें सब, कीलों को अपने वेश से,
लोग जितने बढ़ते जाते, उतनी ही बढ़तीं कीलें,
जेब अभी तक है खामोश, चीखती रहती हैं कीलें,
चिक-चिक रोज कराएं, हर घर मे ये कीलें।
अनगिनत छेद कर चुकीं, फिर भी न निकलीं कीलें।

बुद्धु चिड़िया

एक चिड़िया ने पार किया , अपने देश के सरहद को।
जिस देश को पार किया, वो बहुत ही प्यारा था।
जिस देश मे जा पहुँची, वो भी उसको प्यारा है।
एक देश में मिला सहारा, दुसरा देश ठुकराता है।
न चिड़िया की बोली , न रंग उसे भाता है।
उसके पंख कुछ काले हैं, आँखें नीली-नीली हैं।
इनके, पंख हैं उजले-उजले,और आँखें पीली-पीली हैं।
उसनें तो बस उड़ना सीखा, सरहद न पहचानती थी।
होगें सभी एक जैसे, वो तो यही जानती थी।
बोली रंग के अन्तर को, अब तो उसने समझ लिया।
पर हवा, मिट्टी और पानी, इनमें अन्तर न समझ सकी।
घृणा, नफरत, भेदभाव, मन में जज़्ब न कर सकी।
इसीलिए तो कहलाती है, वो सबसे बुद्धु चिड़िया।
कभी-कभी पार कर सीमा, आ जाती है वो चिड़िया।

प्रेम तो बस प्रेम है

कान बन्द रहने पर भी, सुनाई बहुत कुछ देता है,
आँखें बन्द हो फिर भी, दिखाई बहुत कुछ देता है,
बिना स्पर्श किए भी, हम महसुस कर सकते हैं,
प्रेम तो बस प्रेम है, जिसे दिल से छू सकते हैं।

न इसका रंग और न रूप, न आकृति की हमें समझ,
शायद ये भी निराकार है, नहीं इस पर किसी का वश,
इसे सत्य और धैर्य के सूत्र से बांध सकते हैं।
प्रेम तो बस प्रेम है, जिसे दिल से छू सकते हैं॥

धूप सा बिखरता है, समीर सा मचलता है,
मन की बगीया में, चुपके-चुपके उतरता है,
इसकी बासंती साँसों को, हम झट सुन सकते हैं,
प्रेम तो बस प्रेम है, जिसे दिल से छू सकते हैं॥

भूख नाचती है

तवे पर रोटी नाचती, पानी में मछली नाचती,
पर पेट की नगरी में तो, भूख ही नाचती है।

छोटे-बड़े घरों में, सबको ही दौड़ाती है,
बिन घुंघरू बिन थापों के, ख़ुशी में संतापों में,
संकटों के भीड़ में भी, थिरक-थिरक जाती है।
पर पेट की नगरी में तो, भूख ही नाचती है॥

राजा हो या रंक, ज्ञानी हो या संत,
राज सबपे करती है, हारे हैं सभी इससे,
करती हैं मनमानी, उंगली पर नचाती है।
पर पेट की नगरी में तो, भूख ही नाचती है॥

मदारी बनी भूख है, इंसान बना बन्दर ,
छोटी सी चर्म थैली में, भूख का बवंडर,
चूल्हे से निकलती लपटें, शीतल छींटे मारती है।
पर पेट की नगरी में तो, भूख ही नाचती है॥

भिखारिन रास्ते की

बनी है किस मिट्टी की,
भिखारिन रास्ते की,।
फटी साड़ी में लिपटी,
बेजान लाश जैसी,
ठोकर खाती रहती,
फिर भी जीती रहती,
उम्र है सस्ते की।
बनी है किस मिट्टी की,
भिखारिन रास्ते की ।।
आँचल भीगा हुआ है,
आँखों में भी पानी,
अधर सूखे-सूखे,
बस याद दिलाते हैं,
नागफनी के पत्तों की।
बनी है किस मिट्टी की,
भिखारिन रास्ते की।।
शायद पहुँच जाए,
शाम तलक घर को,
बच्चों के भूखे पेट में,
थोड़ी रोटी डाल पाए,
रोटी भी छीनने की।
बनी है किस मिट्टी की,
भिखारिन रास्ते की ।।
एक बूढ़ी पोटली भी है,
टूटे चरमराते खाट पर,
बुझी आँखों की रोशनी,
खोजती है दीवार पर,
आवाज करती है पोटली,
हरदम खाँसने की।
बनी है किस मिट्टी की,
भिखारिन रास्ते की,
भीख मांगने से भी,
इसका पेट नही भरा,
आवाजें आती है छप्पर पे,
पत्थरों के गिरने की।
बनी है किस मिट्टी की,
भिखारिन रास्ते की।

सपनों का शीशा गिरा

सपनों का शीशा गिरा,
चूर-चूर हो कर रह गया।
हौसला बचा नहीं,
नए ख्वाब सजाने के लिए।
अपने हमसे क्या रूठे,
खुशियाँ भी रूठ गयीं।
फिर ऐसी रूठी तकदीर,
तरकीब नहीं मनाने के लिए।
नसीहत लेना और देना,
दोनों ही अब गवारा नहीं।
उब गया है मन,
कुछ भी आजमाने के लिए।
मन के जले चमन में,
एक फाँस बच गयी है।
बची रहे वो ही अब,
दुश्मनों को चुभाने के लिए।

आतंक की पहेली

स्थिरा तू कब तक, यूँ ही स्थिर रहेगी।
देखेगी मौत का ताण्डव, फिर भी चुप रहेगी,
पाप का बोझ तुझ पर, बढ़ता ही जा रहा है,
हाथ पर हाथ धरे, क्या बैठी ही रहेगी ?
स्थिरा तू कब तक, यूँ ही स्थिर रहेगी ।।

कान फटने लगे हैं, सुन अत्याचारों की बातें,
कहीं धर्म पर बगावत, झूठे अवतारों की बातें ,
कब तू खड़ी हो कर, रूद्राणी रूप धरेगी।
स्थिरा तू कब तक, यूँ ही स्थिर रहेगी ।।

पाप के आहट से ही, तू करवट बदलती थी,
नाच रहा तुझ पर चढ़, कैसे न पलटती है,
आतंक की अनसुलझी, पहेली कब सुलझेगी ?
स्थिरा तू कब तक, यूँ ही स्थिर रहेगी ।।

चुभते चेहरे

टूट गया तो टूट गया दिल,
अब उसका फिर जुड़ना क्या।
मुरझाए फूल, पंखुड़ियाँ गिरीं,
अब उनका फिर खिलना क्या।
जिसने दोस्ती का, मतलब न समझा,
उससे और उम्मीद करना क्या।
चुभते हैं कुछ लोगों के चेहरे,
उनके करीब अब रहना क्या।
उनकी खुरदरी सी हंसी से,
खुद का दामन भिगोना क्या।
नासूर बने सितम किसी के,
अब और सितम सहना क्या।
गम के वीराने से मंजर में,
अक्स ए ख़ुशी का दिखना क्या।
कश्ती सम्भली फिर डूब गई,
खोए पतवार का मिलना क्या।
टूट गया तो टूट गया दिल,
अब उसका फिर जुड़ना क्या।

खुदा को पसंद है

खुदा को पसंद है, हँसती सूरत तेरी,
यूँ रोना चेहरा लिए बार-बार,
उसके सामने तू जाया न कर।
जानता है वो तेरे, दिल की सारी बातें,
बनाकर हजार झूठे बहाने,
उसे हरदम सुनाया न कर।

काँटें हैं जहाँ, फूल भी जरूर होंगे,
ग़मों के साथ ही, खुशियों के नूर होंगे,
काँटों की चुभन से ही, रूबरू कराया न कर।
बात-बे-बात शिकवा शिकायतें तेरी,
उब जाता है वो भी, देख हरकतें तेरी,
उसे ऐसे जाल में उलझाया न कर।
तू है उसका ख़ास, ये तू भी जानता है,
करेगा वो तेरी ही, ये तू भी मानता है,
उसे ज़ज्बातों के आइने, दिखाया न कर।
बने ख़ुशबू अमन की, बगावतें तेरी,
सुकून दे खुदा को, भी मोहब्बतें तेरी,
ऐसे हालात चारों ओर बनाया तू कर।
खुदा को पसंद है हँसती सूरत तेरी,
यूँ रोना चेहरा लिए बार-बार,
उसके सामने तू जाया न कर।

मेरी ख़ुशी

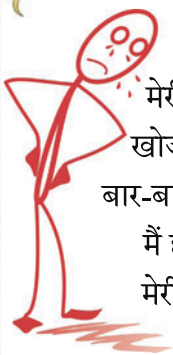

मेरी ख़ुशी गुम हो गयी, इस दुनिया के मेले में।
खोजते-खोजते राहों में, जीवन की शाम हो गई।
बार-बार यही लगता था, शायद वो मुझे मिल जाएगी।
मैं ही भूल बैठा उसे, दुःख के अजब झमेले में।
मेरी ख़ुशी गुम हो गयी, इस दुनिया के मेले में॥

जब-जब याद आई उसकी, मन मेरा व्याकुल हो गया।
कहाँ-कहाँ न ढूंढा उसको, लेकर उम्मीदों का दीया।
अंधेरा ही अब तक हाथ लगा, रो लिया बहुत अकेले में।
मेरी ख़ुशी गुम हो गयी, इस दुनिया के मेले में॥

मेरी नन्ही छोटी सी ख़ुशी, क्या अब भी छोटी ही होगी।
वो मुझसे दूर होकर भी, क्या नहीं बिलखती होगी ?
उँगली उसकी छूटी मुझसे, किस मनहूस कुबेले में।
मेरी ख़ुशी गुम हो गयी, इस दुनिया के मेले में॥

मेरी ख़ुशी न मिली न सही, औरों की ख़ुशी तो मिल जाए।
जीवन संध्या के इस पल में, राहत की हँसी उन्हें दे जाए।
मेरे जैसी सबकी ख़ुशी, खोई होगी खेलमखेले में।
मेरी ख़ुशी गुम हो गयी, इस दुनिया के मेले में॥

गुरू

ज्ञान धन बाँट-बाँट कर, खुद भिक्षुक बना रहे,
अन्याय सहे, चुप रहे, वो सच्चा गुरू बना रहे,
बदल गई गुरू की परिभाषा, गुरू भी इसे समझता रहे।
आज तो यही सच है, गुरू सबसे डरता रहे॥

जीवन का पाठ पढ़ाने वाला, जीवन क्या सोचता रहे,
कलम चलाना, सिखाने वाला,अंगूठा छाप बनता रहे,
गुरू है या अजीब प्राणी, हर शक्स उसे घूरता रहे।
आज तो यही सच है, गुरू सबसे डरता रहे॥

जो उससे ज्ञान लेता है, वही सर पर चढ़ा रहे,
आदर करे न करे कोई, चौकसी हरदम करता रहे,
गुरू के सिर पर चाँद चमके, फिर भी नसीहत लेता रहे।
आज तो यही सच है, गुरू सबसे डरता रहे॥

वर्ष में एक दिन उसका, वो भी उसका ना रहे,
मान, सम्मान किताबी बातें, राहत को तरसता रहे,
वो दिन अब हवा हुए, जब गुरू ईश्वर बना रहे।
आज तो यही सच है, गुरू सबसे डरता रहे॥

हरे पत्तों के हरे मोती

क्यों हरे नही होते, हरे पत्तों से झरते मोती,
बीते दिनों की यादें भी, सुनहरी क्यों नहीं होती ?

गुमसुम से दिन रहते, तन्हा-तन्हा सी रातें,
क्यों सुबह के जैसी खिली, जीवन की शाम नहीं होती ?

काली-काली परछाइयाँ, क्यों उजली नहीं होतीं,
क्यों हर क्षण चमकती, खुशियों की शबनम नहीं होती ?

डर जाते हैं पंछी, क्रूर आहटें सुनकर,
काश, उनके पंखों में कभी, कतरन नही होती।

जो वो न मिलते कभी, जीवन की राहों में ,
तो काल सर्पिणी कितनी,करवटें बदल रही होती।

हरे पत्तों से झड़ते रहते, हरदम हरे मोती,
बटोर लेती सारे मोती, दामन में छुपा लेती।

सावधान ! अमन के लूटेरो

अंधेरे का कारवां कब का , बड़ी दूर जा चुका है।
सावधान ! अमन के लूटेरो, अभी देश जाग रहा है।

जागता ही रहेगा अब, कयामत के दिन तक।
तुम्हारी गंदी मंशा भी, बखूबी भांप रहा है।
सावधान ! अमन के लूटेरो, अभी देश जाग रहा है।।

जागती हैं सड़कें, गलियाँ, चौराहे भी सतर्क हैं।
हर घर तुम्हारी हरकतें, हर वक़्त ताक रहा है।
सावधान ! अमन के लूटेरो, अभी देश जाग रहा है।।

कर लो कोशिशें हजार, अबकी मुँह की खाओगे।
वो भी तुम्हारी कोशिशों की, जहरीली लकीरें नाप रहा है।
सावधान ! अमन के लूटेरो, अभी देश जाग रहा है।।

छोड़ दो ये सोचना, कैसे जले चैन आशियाना।
परवाना बना हर दिल है, एकता की शमां ढक रहा है।
सावधान ! अमन के लूटेरो, अभी देश जाग रहा है।।

भाग जाओ हमारे देश से, मुड़ कर न देखना कभी।
वो तुम्हारी मंसूबों का, सूखा दरख्त ताप रहा है।
सावधान ! अमन के लूटेरो, अभी देश जाग रहा है।।

अंधेरे का कारवां कब का, बड़ी दूर जा चुका है।
सावधान ! अमन के लूटेरो, अभी देश जाग रहा है।।

मैं सरगुजा की बेटी हूं

मैं सरगुजा की बेटी हूँ, सुख शय्या पर लेटी हूँ।

हँसती भी हूँ खुलकर , बनकर चपल चंचल।
चुप रहती हूँ अगर, तो वो भी मेरा हुनर।
भावनाएं व्यक्त करती, तो इसमे भी हूँ कुशल।
ज्ञान पथ पर अनवरत, निर्भय दौड़ लगाती हूँ।
मैं सरगुजा की बेटी हूँ, सुख शय्या पर लेटी हूँ।।

दामन तो दागदार , पहले भी न था मेरा।
उज्वल निर्मल थी, नहीं घनघोर अंधेरा।
झरती थी झरने सी, दमकती थी दामनी सी।
अब तो सारे जहाँ की, रोशनी समेट लेती हूँ।
मैं सरगुजा की बेटी हूँ, सुख शय्या पर लेटी हूँ।।

अनन्त कल्पनाएँ, असंख्य संभावनाएँ।
सभी दिशाओं से आती, उत्साहित सर्व कलाएँ।
दस्तक दे रहा है, विकास मेरे दर पर।
मैं भी आगे बढ़ उसका, स्वागत कर लेती हूँ।
मैं सरगुजा की बेटी हूँ, सुख शय्या पर लेटी हूँ।।

असफलताओं का मुझसे, कहीं दूर है बसेरा।
साथ देने को सभी, तैयार है अब मेरा।
धीरे-धीरे ही सही, पर हुआ है सुखद सवेरा।
शाम होने न दूँगी, ये शपथ लेती हूँ।
मैं सरगुजा की बेटी हूँ, सुख शय्या पर लेटी हूँ।।

श्रीमती गीता द्विवेदी (शिक्षिका)

प्राथमिक शाला उधेनुपारा,
ग्राम पंचायत: करजी, जनपद: राजपुर,
जिला - बलरामपुर (छत्तीसगढ़)
पिन कोड़ 497118
सम्पर्क नम्बर 9340923257
Email- geetadwivedi1973@gmail.com

निजी जानकारी

जन्म तिथि	:	06/ 01 / 1974
जन्म स्थान	:	अम्बिकापुर, सरगुजा (छत्तीसगढ़)
शिक्षा	:	स्नात्तकोत्तर (हिन्दी), डी.एड़
माता का नाम	:	श्रीमती अन्नपूर्णा देवी
पिता का नाम	:	श्री राम नरेश पान्ड़ेय
सासु माँ का नाम	:	श्रीमती फुलमती देवी
ससुर का नाम	:	श्री जनार्दन द्विवेदी
पति का नाम	:	श्री राज नारायण द्विवेदी (समाजसेवी)
सेवा कार्य	:	शिक्षिका
स्थायी निवास	:	सिंगचौरा, पत्रालय - गोपालपुर, थाना- राजपुर, जिला -बलरामपुर (छत्तीसगढ़) ४९७११८

साहित्यिक उपलब्धि

- पहली पुस्तक 'अनुभूति' काव्यसंग्रह का प्रकाशन नवजागरण प्रकाशन नई दिल्ली से 2019 में हुआ।
- प्रथम सम्मान शांतिकुंज हरिद्वार द्वारा राजपुर में आयोजित जनसभा में स्वरचित गायन प्रतियोगिता में द्वितीय स्थान
- सर्वश्रेष्ठ समाज पथप्रदर्शक सम्मान 2019
- काव्यश्री अलंकरण सम्मान
- साहित्य रत्न सम्मान - 2018
- हिन्दी साहित्य सरिता सम्मान 2019
- सहभागिता सम्मान 2019
- मुक्तक शतकवीर सम्मान 2018
- महामना नवोदित साहित्य सृजन सम्मान
- श्रेष्ठ दोहा सृजन कलम की सुगंध सम्मान 2018
- काव्य मित्र सम्मान 2018
- काव्य रंगोली मातृत्व ममता सम्मान
- शारदा सम्मान 2019
- कलम से रचियता सम्मान 2019
- कलम शिक्षा सम्मान 2019
- चौपाई शतकवीर सम्मान 2019
- उत्कृष्ट रचनाकार सम्मान
- राष्ट्रप्रेमी सम्मान 2019
- लघुकथा प्रतियोगिता 2019 में तृतीय स्थान प्राप्त
- काव्य प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त होने पर सम्मान पत्र
- श्रेष्ठ रचनाकार सम्मान 2019

संपादक की कलम से....

एक संपादक के लिए अत्यंत हर्ष का विषय होता है यदि जिस पुस्तक का वो संपादन कर रहा हो, उसका लेखक या लेखिका सिद्धहस्त हो और अपने लेखन शैली में पारंगत हो। पाठक तक अपनी बात भलीभांति पहुँचाना एक बात है और पाठक के अंतर्मन को छूना एक अलग ही कला है। मुझे ख़ुशी है कि प्रस्तुत पुस्तक की लेखिका यद्यपि पुस्तक के शीर्षक के अनुसार अपने "अंतर्मन के कोने से" निकले भावों की अभिव्यक्ति में प्रयासरत है, तथापि अपनी बात से वह पाठकों के अंतर्मन को झिंझोड़ने में अवश्य ही सक्षम लगी। एक अच्छा रचनाकार वो है जो हमें चकित करे, सोचने पर विवश करे।

उदहारण के तौर पर, आज के इंटरनेट युग में विलुप्त होते पत्राचार को सोनचिरईया की उपमा देकर कवियत्री ने एक बार मुझे भी असमंजस में डाल दिया। काव्य लेखन में शब्दों की संरचना और अर्थ से खेलना कवि/कवियत्री के लेखन कौशल को दर्शाता है जो कवियत्री 'गीता द्विवेदी'ने इन पंक्तियों में बाखूबी दर्शाया है ....

"इसकी तुम्हें किसने सज़ा दी, हमारे साथ ही सजा दिया।"

..... कविता 'सज़ा'

या

"स्थिरा तू कब तक, यूँ ही स्थिर रहेगी।"

..... कविता 'आतंक की पहेली'

कवियत्री ने प्रस्तुत संग्रह में यूँ तो कई विषयों को छुआ है, जहाँ एक ओर उनकी आस्था और विश्वास का हमें प्रत्यक्ष रूप उनकी धर्म पर आधारित कविताओं में मिलता है तो राष्ट्रप्रेम उनकी भारतवर्ष पर लिखी कविताओं में। छत्तीसगढ़ के नगर अंबिकापुर की रहने वाली गीता द्विवेदी

का प्रकृति से प्रेम होना स्वाभाविक है, जो कई कविताओं में प्रदर्शित भी होता है पर, 'सीता का प्रकृति प्रेम' कविता में कवियत्री ने सीता मईया के प्रकृति से इतना सुन्दर वर्णन किया है की हम भी कवियत्री के साथ कह उठे .. *धरती में है सीता, या सीता ही धरती माता है।*

..... कविता 'सीता का प्रकृति प्रेम'

कवियत्री की समसामायिक विषयों पर भी अच्छी पकड़ है जिसका प्रत्यक्ष उदहारण है।

न खोता कोई बचपन, न जवानी बजबजाती,
एक रोटी जो जीने के लिए, खुशी से मिल जाती।

..... कविता 'एक रोटी'

कवियत्री गीता द्विवेदी एक शासकीय विद्यालय में शिक्षिका हैं। शिक्षिका होने के नाते उनके कुछ अनुभव भी कविताओं में स्वतः ही अपना स्थान आश्वस्त कर लेते हैं जैसे.....

ज्ञान के फूल खिला दूँ मैं,
शिक्षक और विद्यार्थी का, रिश्ता सार्थक बना दूँ मैं।

..... कविता 'ज्ञान के फूल'

कवियत्री की प्रत्येक कविता पाठक पर एक अमिट छाप छोड़ जाती है जो निश्चय ही आप पाठक अवश्य अनुभव करेंगे। संक्षेप में मैं इतना ही कहूँगा की कवियत्री गीता द्विवेदी एक सक्षम कवियत्री हैं जो निश्चय ही आने वाले समय में स्वयं को स्थापित करेगी। यह मेरा विश्वास भी है और एक सुखद आस भी। उनकी दूसरी पुस्तक 'अंतर्मन के कोने से...' का संपादन करके मैं स्वयं में हर्ष और गौरव की अनुभूति कर रहा हूँ। ऐसी काबिल कवियत्री की पुस्तक का संपादन मेरे लिए निसंदेह एक सम्मान है।

विकास शर्मा 'दक्ष'
लेखक/संपादक
पंचकुला (हरियाणा)

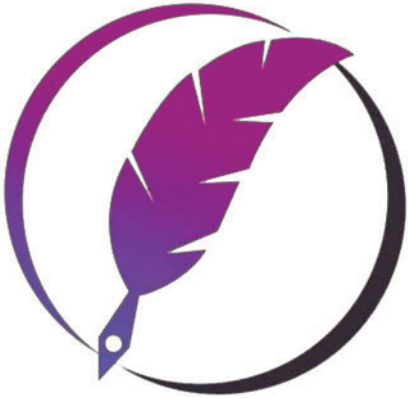

A

Wordsmith Paperback

Brought to you by

The Indian Wordsmith

PANCHKULA

9888919667, 9306115685

EMAIL : 2theindianwordsmith@gmail.com

अंकुरित होकर पल्लवित होने की अनुभूति है 'अंतर्मन के कोने से'

दैनिक राष्ट्रीय सहारा

'अंतर्मन के कोने से' साहित्य जगत के अंतर्मन में एक अलग पहचान बना पाएगी

दैनिक भारत भास्कर

'अंतर्मन के कोने से' पुस्तक मन को पवित्र कर देती है

दैनिक अम्बिकावाणी

'अंतर्मन के कोने से' पुस्तक मन को सच्चाई से रूबरू कराती है

दैनिक आदित्य समय

कवियत्री के अंकुरित होने से लेकर पल्लवित होने की अनुभूति है 'अंतर्मन के कोने से' में

दैनिक रिहन्द टाइम्स

मेरे हृदय में स्वअनुभूति से अंतःमन में अंकुरित साहित्यिक भाव, 'अंतर्मन के कोने से' एकल काव्यधारा के स्वरूप में साहित्यप्रेमी पाठकों को सादर समर्पित है।

गीता द्विवेदी

The Indian Wordsmith

PANCHKULA

9888919667 , 9306115685

ISBN 978-81-944012-8-5